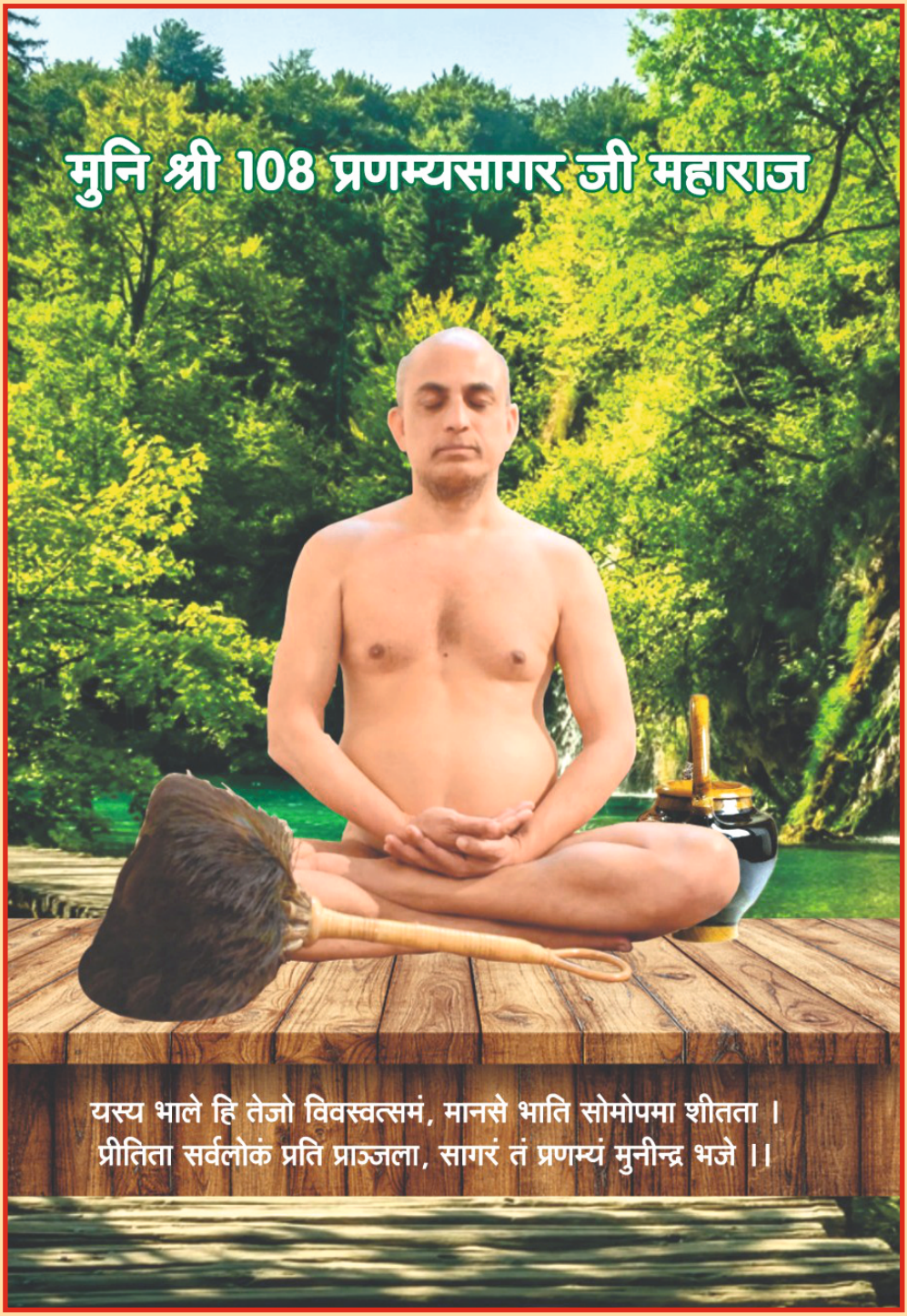
मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी महाराज
यस्य भाले हि तेजो विवस्वत्समं, मानसे भाति सोमोपमा शीतता ।
प्रीतिता सर्वलोकं प्रति प्राज्जला, सागरं तं प्रणम्यं मुनीन्द्र भजे ।।

कृति : **पाइय थुदि संगह (प्राकृत स्तुति संग्रह)**

आशीर्वाद : **आचार्यश्री 108 विद्या सागर जी महाराज के परम प्रभावक शिष्य मुनिश्री 108 प्रणम्य सागर जी महाराज**

अधिकार : सर्वाधिकार सुरक्षित

किसी को भी प्रकाशित करने का अधिकार है। किताब का स्वरूप, ग्रन्थ नाम, लेखक, सम्पादक एवं स्तर परिवर्तन न करें। प्रकाशन के पहले लिखित अनुमति आवश्यक है।

पुण्यार्जक :

- **प्राकृत जैन विद्या पाठशाला, नोएडा, सेक्टर-50 (उत्तर प्रदेश)**
- **श्री विनोद जी पवन जी जैन, ग्वालियर (मध्य प्रदेश)**
- **श्रीमती रेणु जी रवि जी जैन, जयपुर (राजस्थान)**

संस्करण : द्वितीय, जून-2025

आइएसबीएन: 978-81-953579-7-0

आवृत्ति : 1100 प्रतियाँ

मूल्य : ₹ 60/-

प्रकाशक : **आचार्य अकलंकदेव जैनविद्या शोधालय समिति**
109, शिवाजी पार्क देवास रोड़, उज्जैन,
फोन: 2519071, 2518396
email: sss.crop@yahoo.com

प्राप्ति स्थान : **आर्हत विद्या समिति**
गोटेगाँव, नरसिंहपुर (म.प्र.)
मोबा.: 09425837476
शैलेन्द्र शाह, उज्जैन
09425092483, 09406881001

प्राकृत जैन विद्या पाठशाला समिति (रजि.)
नसियाँ मन्दिर, सरकुलर रोड़, रेवाड़ी (हरियाणा)
मोबाइल: 9784601548, 9817006981
Website: www.prakritvidya.com
E-mail: prakratvidyapathshala@gmail.com

मुद्रक : आरसी प्रैस, नई दिल्ली #9871196002

अणुकमणिका (अनुक्रमणिका)

1.	णमोक्कार मंत (णमोकार मंत्र)	4
2.	पागद भावणा (प्राकृत भावना)	5
3.	सिद्धभत्ति (सिद्धभक्ति)	6
4.	चउवीस तित्थयर थुदि (चौबीस तीर्थंकर स्तुति)	10
5.	सिद्धभत्ति-2 (सिद्धभक्ति-2)	11
6.	सुदभत्ति (श्रुत भक्ति)	12
7.	आयरिय भत्ति (आचार्य भक्ति)	13
8.	पंचमहागुरु भत्ति (पंचमहागुरु भक्ति)	15
9.	गोम्मटेस भत्ति (गोमटेश भक्ति)	18
10.	वड्ढमाण सामि थुदि (वर्धमान स्वामी स्तुति)	25
11.	गोयम गणहर थुदि (गौतम गणधर स्तुति)	26
12.	भजन-पसण्ण करी थुदि (प्रसन्न करने वाली स्तुति)	29
13.	पडिग्गहण विही (पड़गाहन विधि)	30
14.	चउवीस जिणभत्ति (चौबीस जिनभक्ति)	31
15.	गोम्मटेस थुदि (गोम्मटेश स्तुति)	33
16.	चउवीस तित्थयर थवो (चौबीस तीर्थंकर स्तव)	36
17.	वीयराय भत्ति (वीतराग भक्ति)	38
18.	पागदधजगीद (प्राकृत ध्वज गीत)	39
19.	णवदेवदा थुदि (नवदेवता स्तुति)	40
20.	बारह भावणा (बारह भावना)	42
21.	सुद पंचमी पूया (श्रुत पंचमी पूजा)	46
22.	सुयपंचमीथुदि (श्रुत पंचमी स्तुति)	49
23.	णंदीसर भत्ति (नंदीश्वर भक्ति)	50
24.	जम्मकल्लाणभत्ति (जन्म कल्याण भक्ति)	52
25.	णिव्वाणकल्लाणभत्ति (निर्वाण कल्याण भक्ति)	58
26.	जिणवाणी थुदि (जिनवाणी स्तुति)	64

णमोक्कार मंत (णमोकार मंत्र)

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आइरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्व साहूणं ।

एसो पंच णमोयारो, सव्व पावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढ़मं होइ मंगलम् ।।

मंगल, उत्तम, शरण पाठ

चत्तारि मंगलं, अरिहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहू मंगलं, केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं।
चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा।
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरिहंत सरणं पव्वज्जामि, सिद्ध सरणं पव्वज्जामि,
साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि।।

पागद भावणा

(प्राकृत-भावना)

हे भगवन्!
अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ
कम्मक्खओ बोहि-लाहो सुगइ-गमणं समाहि-मरणं
जिणगुण-संपत्ति होउ मज्झं।

अर्थ :-

मैं जिनेन्द्र देव की सदा पूजा करता हूँ, वंदना करता हूँ, अर्चना करता हूँ और उन्हें नमस्कार करता हूँ। मेरे दुखों का नाश हो, कर्मों का क्षय हो, मुझे रत्नत्रय की प्राप्ति हो, सुगति में गमन हो, समाधि मरण हो और भगवान जिनेंद्र के गुणों की प्राप्ति हो।

सिद्धभक्ति
(सिद्धभक्ति)

अट्ठविहकम्ममुक्के अट्ठगुणड्ढे अणोवमे सिद्धे।
अट्ठमपुढविणिविट्ठे णिट्ठियकज्जे य वंदिमो णिच्चं॥1॥

अन्वयार्थ–(अऊन्७लृविह कम्ममुक्के) जो आठ प्रकार के कर्मों से मुक्त हैं (अट्ठगुणड्ढे) जो आठ गुणों से सम्पन्न हैं (अणोवमे) जो अनुपम हैं (अट्ठम-पुढवि-णिविट्ठे) जो अष्टम पृथ्वी पर विराजमान हैं (य) और (णिट्ठिय कज्जे) जिनके समस्त कार्य समाप्त हो चुके हैं (सिद्धे) उन सिद्धों की (णिच्चं) हमेशा (वन्दिमो) वन्दना करता हूँ।

तित्थयरेदरसिद्धे जलथलआयासणिव्वुदे सिद्धे।
अंतयडेदरसिद्धे उक्कस्सजहण्णमज्झिमोगाहे॥2॥

अन्वयार्थ–(तित्थयरेदर-सिद्धे) तीर्थङ्कर सिद्ध और इतर सिद्ध (जल-थल-आयास-णिव्वुदे सिद्धे) जल, थल, आकाश से निर्वाण प्राप्त सिद्ध (अंतयडेदर-सिद्धे) अन्तकृत सिद्ध तथा बिना अन्तकृत सिद्ध (उक्कस्स-जहण्ण-मज्झिमोगाहे) उत्कृष्ट, जघन्य, मध्यम अवगाहना से सिद्ध।

उड्ढमहतिरियलोए छव्विहकाले य णिव्वुदे सिद्धे।
उवसग्गणिरुवसग्गे दीवोदहिणिव्वुदे य वंदामि॥3॥

अन्वयार्थ–(उड्ढमह-तिरिय लोए) ऊर्ध्व, मध्य और तिर्यक् लोक से जो सिद्ध हुए हैं (य) और जो (छव्विह काले णिव्वुदे सिद्धे) छह प्रकार के कालों में निर्वाण को प्राप्त हुए हैं (उवसग्ग-णिरुवसग्गे) जो उपसर्ग के साथ तथा उपसर्ग के बिना सिद्ध हुए हैं (य) और (दीवोदहि-णिव्वुदे) द्वीप तथा समुद्र से निर्वाण को प्राप्त सिद्धों की मैं (वन्दामि) वन्दना करता हूँ।

पच्छायडेय सिद्धे दुगतिगचदुणाणपंचचदुरजमे।
परिवडिदापरिवडिदे संजमसम्मत्तणाणमादीहिं।।4।।

अन्वयार्थ–(एय-दुग-तिग-चदु-णाण पंच-चदुर-जमे) एक, दो, तीन, चार ज्ञान तथा पाँच, चार संयम (पच्छाय सिद्धे) के बाद जो सिद्ध हुए (परिवडिदा परिवडिदे) जो प्रतिपाती होकर तथा बिना प्रतिपाती हुए (संजम-सम्मत्त-णाणमादीहिं) संयम, सम्यक्त्व, ज्ञान आदि की अपेक्षा सिद्ध हुए हैं।

साहरणासाहरणे सम्मुग्धादेदरे य णिव्वादे।
ठिदपलियंकणिसण्णे विगयमले परमणाणगे वंदे।।5।।

अन्वयार्थ–(साहरणासाहरणे) साभरण तथा अनाभरण सिद्ध (सम्मुग्धादेदरे य णिव्वादे) संमुद्घात सिद्ध और संमुद्घात के बिना सिद्ध (ठिद-पलियंक-णिसण्णे) कायोत्सर्ग और पल्यङ्क आसन से सिद्ध (विगयमले) जो कर्म मल से रहित हैं (परम-णाणगे) और उत्कृष्ट ज्ञान वाले हैं (वन्दे) उन्हें मैं वन्दना करता हूँ।

पुंवेदं वेदंता जे पुरिसा खवग - सेढिमारूढा।
सेसोदयेण वि तहा ज्झाणुवजुत्ता य ते दु सिज्झंति।।6।।

अन्वयार्थ– (जे पुरिसा) जो पुरुष (पुंवेदं वेदन्ता) पुरुष वेद का वेदन करते हुए (खवगसेढिमारूढा) क्षपक श्रेणी पर आरूढ होते हैं (तहा) तथा (सेसोदयेण वि) शेष वेदों के उदय से भी (झाणुव-जुत्ता य) ध्यान में उपयुक्त होते हैं। (ते दु सिज्झंति) वे सिद्ध होते हैं।

पत्तेयसयंबुद्धा बोहियबुद्धा य होंति ते सिद्धा।
पत्तेयं पत्तेयं समये समयं पणिवदामि सदा॥7॥

अन्वयार्थ– (पत्तेयसयं बुद्धा) जो प्रत्येक बुद्ध और स्वयं बुद्ध (य) तथा (बोहियबुद्धा) बोधित बुद्ध हैं (ते सिद्धा होंति) वे सिद्ध होते हैं। (पत्तेयं पत्तेयं) उन प्रत्येक-प्रत्येक को (समये) एक समय में (समयं) तथा एक साथ (पणिवदामि) प्रणाम करता हूँ।

पणणवदुअट्ठवीसा चउतियणवदी य दोण्णि पंचेव।
वावण्णहीणवियसयपयडिविणासेण होंति ते सिद्धा॥8॥

अन्वयार्थ–(पणणवदु अट्ठवीसा) पाँच, नौ, दो, अठाईस (चउतिय-णवदीय) चार, तेरानवें और (दोण्णि पंचेव) दो, पाँच इन (बावण्ण-हीण-बियसय) दो सौ में बावन कम (पयडिविणासेण) प्रकृति के विनाश से (ते सिद्धा होंति) वे सिद्ध होते हैं।

अइसयमव्वावाहं सोक्खमणंतं अणोवमं परमं।
इंदियविसयातीदं अप्पत्तं अच्चवं च ते पत्ता॥9॥

अन्वयार्थ–(अइसयं अव्वाबाहं) अतिशय, अव्याबाध (अणंतं) अनन्त (अणोवमं) अनुपम (परमं) उत्कृष्ट (इंदियविसयातीदं) इन्द्रिय विषयों से रहित (अप्पत्तं) जो कभी न प्राप्त हुआ हो (अच्चवं) सदा रहने वाला (सोक्खं) सुख (ते) उन्हें (पत्ता) प्राप्त होता है।

लोयग्गमत्थयत्था चरमसरीरेण ते हु किंचूणा।
गयसित्थमूसगब्भे जारिसआयार तारिसायारा॥10॥

अन्वयार्थ–(लोयग्ग-मत्थयत्था) लोक के अग्र-मस्तक पर स्थित (चरमसरीरेण) चरम शरीर से (हु किंचूणा) कुछ न्यून (गय-सित्थमूस-गब्भे) सिक्थ मूषा के गर्भ को प्राप्त (जारिस आयार) जैसा आकार होता है (ते) उनका (हु तारिसायारा) वैसा ही आकार होता है।

जरमरणजम्मरहिया ते सिद्धा मम सुभत्तिजुत्तस्स।
दिंतु वरणाणलाहं बुहयणपरिपत्थणं परमसुद्धं॥11॥

अन्वयार्थ–(जर-मरण-जम्म-रहिया) बुढ़ापा, मरण और जन्म से रहित (ते सिद्धा) वे सिद्ध (मम सुभत्तिजुत्तस्स) मुझ सुभक्ति में लगे हुए को (वर-णाण-लाहं) उस उत्कृष्ट ज्ञान का लाभ (दिंतु) देवें (बुहयण-परिपत्थणं) जो ज्ञानियों से प्रार्थनीय तथा (परमसुद्धं) परम शुद्ध है।

किच्चा काउस्सग्गं चउरट्ठयदोसविरहियं सुपरिसुद्धं।
अइभत्तिसंपउत्तो जो वंदइ लहु लहइ परमसुहं॥12॥

अन्वयार्थ–(चउरट्ठयदोसविरहियं) आठ गुणा चार अर्थात् बत्तीस दोषों से रहित (सुपरिसुद्धं) अत्यन्त परिशुद्ध (काउस्सग्गं) कायोत्सर्ग (किच्चा) करके (अइभत्ति-संपउत्तो) अति भक्ति से युक्त हुआ (जो) जो (वंदइ) वन्दना करता है (लहु) वह शीघ्र ही (परमसुहं) परम सुख को (लहइ) प्राप्त करता है।

चउवीस तित्थयर थुदि
(चौबीस तीर्थंकर स्तुति)

-मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी

आदीसं वंदे जिणमजियं संभवमभिणंदणसुमइं।
पउमसुपासं चंदं सुविहिं सीयलसेयवासुपुज्जं।।
विमलमणंतं धम्मपवत्तय - धम्मं संतिं तिपयहरं।
कुंथुमरं सिवकंतारमणं मल्लिं कम्मियचुण्णकरं।।
मुणिसुव्वय-णमिणाहजिणेसं जदुकुलतिलयं णेमिजिणं।
पासपहुं भयवं वरवीरं वंदे सव्वं तित्थयरं।।
माणुस - खेत्ते विहरणभूदा सीमंदरजिणभयवंता।
दिंतु समाहिं बोहिसुलाहं रवि ससि सहस पयासंता ।।

भावार्थ- आदिनाथ जिन की, अजितनाथ की, संभवनाथ की, अभिनंदननाथ, सुमतिनाथ की, पद्मप्रभु, सुपार्श्वनाथ की, चंदप्रभ की, सुविधिनाथ की, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्य भगवान की, विमलनाथ की, अनंतनाथ की, धर्मप्रवर्तक धर्मनाथ की, तीन पद धारी शांतिनाथ, कुंथुनाथ की, शिवसुख रूपी स्त्री में रमण करने वाले अरनाथ की, कर्मों को चूर्ण करने वाले मल्लिनाथ की, मुनिसुव्रत, नमिनाथ जिनेश की, यदुकुल के तिलक नेमिजिन की, पार्श्वप्रभु की, भगवान श्रेष्ठ वीरनाथ की, समस्त तीर्थंकर की मैं वन्दना करता हूँ। मनुष्य-क्षेत्र में विहार करने वाले सीमंधर जिन भगवान हजारों सूर्य, चन्द्रमाओं से प्रकाशमान हैं वे हमें बोधि का श्रेष्ठ लाभ तथा समाधि को देवें।

सिद्धभत्ति (सिद्धभक्ति)

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय सुहुमं तहेव अवगहणं।
अगुरुलहु-मव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ।। 1।।
तव-सिद्धे णय-सिद्धे संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमंसामि ।। 2।।

भावार्थ- क्षायिकसम्यक्त्व, अनंतज्ञान, अनंत दर्शन, अनंतवीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व और अव्याबाध सुख- ये आठ गुण सिद्धों के होते हैं। तप-सिद्ध, नय-सिद्ध, चरित्र-सिद्ध, ज्ञान-सिद्ध, दर्शन-सिद्ध, ऐसे सभी सिद्धों को सिर झुकाकर मैं नमस्कार करता हूँ।।1-2।।

इच्छामि भंते सिद्धभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्म-दंसण-सम्मचारित्त-जुत्ताणं अट्ठ-विह-कम्म-विप्प-मुक्काणं अट्ठ-गुण-संपण्णाणं उड्ढलोए-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं तव-सिद्धाणं णय-सिद्धाणं संजम-सिद्धाणं चरित्त-सिद्धाणं अतीदाणागद-वट्टमाणकालत्तय-सिद्धाणं सव्व-सिद्धाणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहि-लाहो सुगइ-गमणं समाहि-मरणं जिणगुण-संपत्ति होउ मज्झं।

भावार्थ- हे भगवन्! सिद्ध भक्ति करने के पश्चात् जो मैंने कायोत्सर्ग किया है उसमें लगे दोषों की आलोचना करने की इच्छा करता हूँ। जो सिद्ध भगवान सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र सहित हैं, आठों कर्मों से रहित हैं, सम्यक्त्वादि आठ गुणों से संपन्न हैं, जो ऊर्ध्वलोक के मस्तक पर विराजमान हैं, जो तपश्चरण से सिद्ध हुए हैं, नयों से सिद्ध हैं, संयम से सिद्ध हुए हैं, चारित्र से सिद्ध हुए हैं, जो भूतकाल, भविष्यकाल और वर्तमान काल तीनों कालों में सिद्ध हुए हैं, ऐसे सिद्धों की मैं सदा पूजा करता हूँ, वंदना करता हूँ, अर्चना करता हूँ और उन्हें नमस्कार करता हूँ। मेरे दुखों का नाश हो, कर्मों का क्षय हो, मुझे रत्नत्रय की प्राप्ति हो, सुगति में गमन हो, समाधि मरण हो और भगवान जिनेंद्र के गुणों की प्राप्ति हो।

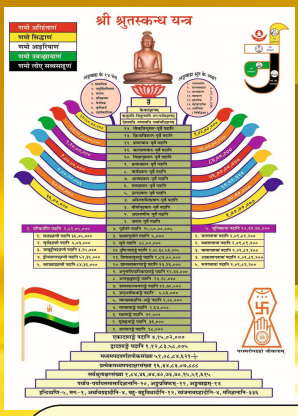

सुदभत्ति (श्रुत भक्ति)

कोटीशतं द्वादश चैव कोट्यो लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव।
पंचाशदष्टौ च सहस्र-संख्यमेतच्छुतं पंचपदं नमामि।।1।।

अरहंत-भासि-यत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मं।
पणमामि भत्ति-जुत्तो सुदणाण-महोवहिं सिरसा।।2।।

भावार्थ- एक सौ बारह करोड़, तेरासी लाख अट्ठावन हजार और पाँच पद प्रमाण इस श्रुतज्ञान को मैं नमस्कार करता हूँ। अरहंत भगवान द्वारा अर्थ रूप से कहे गए और गणधर देव द्वारा ग्रंथ रूप से ग्रंथित किए गए श्रुतज्ञान रूप महासागर को भक्ति पूर्वक मैं सिर झुका कर प्रणाम करता हूँ।।1-2।।

इच्छामि भंते! सुदभत्ति काउसग्गो कओ तस्सालोचेउं अंगोवंग पइण्णय-पाहुढय-परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तथय थुइ-धम्म-कहाइयं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहि-लाहो सुगइ-गमणं समाहि-मरणं जिणगुण-संपत्ति होउ मज्झं।

भावार्थ- हे भगवन्! श्रुत भक्ति करने के पश्चात् जो मैंने कायोत्सर्ग किया है उसमें लगे हुए दोषों की आलोचना करने की इच्छा करता हूँ। श्रुतज्ञान के जो अंग, उपांग, प्रकीर्णक, प्राभृतक, परिकर्म, सूत्र प्रथमानुयोग, पूर्वगत, चूलिका, सूत्रार्थ, स्तुति और धर्म कथा आदि भेद हैं उन सबकी मैं सदा पूजा करता हूँ, वंदना करता हूँ, अर्चना करता हूँ और उन्हें नमस्कार करता हूँ। मेरे दुःखों का नाश हो, कर्मों का क्षय हो, मुझे रत्नत्रय की प्राप्ति हो, सुगति में गमन हो, समाधि मरण हो और भगवान जिनेंद्र के गुणों की प्राप्ति हो।

जयउ सुयदेवदा
श्रुतदेवता जयवंत हो।
(श्री धवला पुस्तक-1)

आयरियभत्ति (आचार्य भक्ति)

श्रुत-जलधि-पारगेभ्यः स्व-परमत-विभावना-पटु-मतिभ्यः।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः ।। 1 ।।

भावार्थ- जो श्रुत ज्ञान के पारगामी हैं, स्वमत और परमत के विचार में कुशल हैं, सुचरित और तप के खजाने हैं और गुणों में महान् हैं; ऐसे गुरुओं को नमस्कार हो।

छत्तीस-गुण-समग्गे पंच-विहाचार-करण-संदरिसे।
सिस्साणुग्गह-कुसले धम्माइरिये सया वंदे ।। 2।।

भावार्थ- जो छत्तीस गुणों से पूर्ण हैं, पाँच प्रकार के आचार के स्वयं पालने वाले हैं, तथा शिष्यों के द्वारा भी उसी आचरण का पालन कराते हैं, शिष्यों के ऊपर अनुग्रह करने वाले हैं, ऐसे धर्माचार्य की मैं वंदना करता हूँ।

गुरु-भत्ति-संजमेण य तरंति संसार-सायरं घोरं।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं जम्मण-मरणं ण पावेंति ।। 3 ।।

भावार्थ- गुरु भक्ति करने से शिष्य घोर संसार-सागर से पार हो जाते हैं। आठ कर्मों का नाश कर देते हैं और जन्म-मरण के दुःख को फिर कभी नहीं पाते।

ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरताः ध्यानाग्नि-होत्राकुलाः।
षट्-कर्माभिरता-स्तपोधन-धनाः साधु-क्रिया-साधवः।। 4 ।।

भावार्थ- जो प्रतिदिन व्रत, मंत्र और होम में लगे रहते हैं, जो ध्यान रूपी अग्नि में हवन करने वाले हैं, आवश्यकादि षट्क्रियाओं में लीन हैं, तपरूपी धन ही जिनका धन है, जो साधुओं की क्रियाओं को कराने में कारणभूत हैं।

शील-प्रावरणा-गुणा-प्रहरणाश् चन्द्रार्कतेजोअधिकाः।
मोक्षद्वार-कपाट-पाटनभटाः प्रीणन्तु मां साधवः।।5।।

भावार्थ- अठारह हजार शील रूपी वस्त्र ओढ़ते हैं, चौरासी लाख गुण ही जिनके पास शस्त्र हैं, चन्द्र और सूर्य से भी अधिक जिनका तेज है, जो मोक्षद्वार के दरवाजे खोलने में सुभट (योद्धा की तरह) हैं; ऐसे साधु मेरी रक्षा करें।

गुरुवः पान्तु नो नित्यं ज्ञान-दर्शन-नायकाः।
चारित्रार्णव-गम्भीरा मोक्ष-मार्गोपदेशकाः ।। 6।।

भावार्थ- जो ज्ञान और दर्शन के नायक हैं, चारित्र रूपी सागर के समान गंभीर हैं और मोक्षमार्ग का उपदेश देने वाले हैं; ऐसे श्री गुरु/आचार्य हमारी नित्य रक्षा करें।

इच्छामि भंते! आइरियभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचारित्त-जुत्ताणं पंचविहाचाराणं आयरियाणं आयारादि-सुद-णाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं तिरयण-गुणपालण-रयाणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहि-लाहो सुगइ-गमणं समाहि-मरणं जिणगुण-संपत्ति होउ मज्झं।

भावार्थ- हे भगवन्! श्रुत भक्ति करने के पश्चात् जो मैंने कायोत्सर्ग किया है उसमें लगे हुए दोषों की आलोचना करने की इच्छा करता हूँ। सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन और सम्यग्चारित्र से युक्त पंचाचार का पालन करने वाले आचार्यों की, आचारांग आदि श्रुतज्ञान का उपदेश देने वाले उपाध्यायों की, रत्नत्रय गुण का पालन करने वाले समस्त साधुओं की मैं सदा पूजा करता हूँ, वंदना करता हूँ, अर्चना करता हूँ और उन्हें नमस्कार करता हूँ। मेरे दुःखों का नाश हो, कर्मों का क्षय हो, मुझे रत्नत्रय की प्राप्ति हो, सुगति में गमन हो, समाधिमरण हो और भगवान जिनेन्द्र के गुणों की प्राप्ति हो।

पंच महागुरु भक्ति
(पंचमहागुरु भक्ति)

मणुय णाइंद-सुर-धरिय-छत्तत्तया, पंचकल्लाण-सोक्खावली-पत्तया।
दंसणं णाण झाणं अणंतं बलं, ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं ।।1।।

भावार्थ- मनुष्यों के इन्द्र चयवर्ती, धरणेन्द्र, देवेन्द्र आदि ने जिनके ऊपर तीन छत्र लगाये हैं। गर्भावतार, जन्माभिषेक, तप, ज्ञान, निर्वाण इन पंच कल्याणों में जो सुख की श्रेणि को प्राप्त हैं तथा पाप गलाने और सुख लाने में समर्थ होने से जो उत्कृष्ट मंगल हैं, वह जिनेन्द्र देव, सर्वज्ञ प्रभु हमें केवल दर्शन, केवल ज्ञान, परम शुक्लध्यान, अपार वीर्य देवें।

जेहिं झाणग्गि-बाणेहिं अइ-दड्ढयं, जम्म-जर-मरण-णयरत्तयं दड्ढयं,
जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं, ते महं दिंतु सिद्धा वरं णाणयं ।।2।।

भावार्थ- जिन्होंने ध्यान रूपी अग्नि बाणों से अति कठोर जन्म, बुढ़ापा, मृत्यु रूपी तीनों नगरों को जला दिया है। जिन्होंने तीन लोक का अग्र शाश्वत स्थान परम निर्वाण प्राप्त कर लिया है। वे सिद्ध प्रभु मेरे लिए केवलज्ञान प्रदान करें।

पंच-हाचार-पंचग्गि-संसाहया, बारसंगाइ-सुअ-जलहि-अवगाहया ।
मोक्ख-लच्छी महंती महं ते सया, सूरिणो दिंतु मोक्खंगयासंगया ।।3।।

भावार्थ- पाँच प्रकार की पंचाग्नि के जो संसाधक हैं। ज्ञानाचार, दर्शनाचार, तपाचार, वीर्याचार और चारित्राचार रूपी पाँच प्रकार की अग्नियाँ कर्म रूपी ईंधन को भस्म करने में समर्थ होने से जो उनका

अनुष्ठान करने वाले हैं। द्वादशांग श्रुत ही महासमुद्र है। सम्यक्त्व आदि रत्न का आश्रय लेने से अथवा गांभीर्य आदि गुण धारण करने से वह उस समुद्र के अवगाहक हैं अर्थात उसका आलोढन करके जो श्रुत के पार को प्राप्त किये हैं तथा इस लोक और परलोक की आशा से रहित सर्व कर्मों के क्षय लक्षण वाले मोक्ष को जो प्राप्त हैं, वह आचार्य देव मुझे अनन्त मोक्ष लक्ष्मी प्राप्त करें।

घोर-संसार-भीमाडवी-काणणे, तिक्ख-वियरालणह-पाव-पंचाणणे।
णट्ठ-मग्गाण जीवाण पहदेसिया, वंदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया ।।4।।

भावार्थ- अति भयंकर चतुर्गति रूप संसार ही भयानक संसार रूपी जंगल है। उसमें हृदय और शरीर को पीड़ा देने वाले अति रौद्र नखों वाले सिंह की तरह पांच पाप हैं। ऐसे संसार जंगल में मिथ्यात्व, मोह, अज्ञान और कुतप में परिणत भव्य जीवों को मोक्ष मार्ग के प्रकाशक हैं उन उपाध्याय परमेष्ठी के चरणों में आकर हम उनकी स्तुति करते हैं।

उग्गतवचरणकरणेहिं झीणं गया, धम्म वर झाण सुक्केक्क झाणं गया।
णिब्भरं तवसिरीए समालिंगया, साहवो ते महं मोक्खपहमग्गया ।।5।।

भावार्थ- उग्र तपश्चरण करने से जिनका शरीर क्षीण हो गया है, जो धर्म, शुक्ल ध्यान को प्राप्त हैं तथा तप रूपी लक्ष्मी से आलिंगित (सहित) हैं, ऐसे वह साधु परमेष्ठी मोक्षमार्ग में मुझे चलावें।

एण थोत्तेण जो पंचगुरुवंदए, गुरुय-संसार-घण-वेल्लि सो छिंदए।
लहइ सो सिद्धसोक्खाइं बहुमाणणं, कुणइ कम्मिंधणं पुंजपज्जालणं ।।6।।

भावार्थ- इस पुण्य रूप स्तवन से जो भव्य जीव पंच परमेष्ठी की स्तुति करता है वह अनन्त संसार से चली आयी बड़ी घनी संसार लता को छेद देता है। वह बहुत जनों से माननीय सिद्ध सुख को प्राप्त करता है। वह भव्य जीव अष्ट कर्म रूपी ईंधन समूह को भस्म कर देता है।

अरुहा सिद्धा-इरिया उवज्झाया साहु पंच परमेट्ठी।
एयाण-णमोयारा भवे भवे मम सुहं दिंतु ।।7।।

भावार्थ- इन्द्र आदि से पूजित स्थान में रहने वाले यह अर्हंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, पाँच परमेष्ठी हैं। इनको किया गया प्रणाम मुझे जन्म जन्म में सुख और उसका कारण भूत पुण्य प्रदान करें।

इच्छामि भंते! पंचमहागुरु-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अट्ठ-महा-पाडिहेर-संजुत्ताणं अरिहंताणं अट्ठ-गुण-संपण्णाणं उड्ढ-लोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं अट्ठ-पवयण-मउ-संजुत्ताणं आयरियाणं आयारादि-सुद-णाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं ति-रयण-गुण पालणरयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-गमणं समाहि-मरणं जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं।

भावार्थ-हे भगवन्! मैंने पंच महागुरु भक्ति का कायोत्सर्ग किया है, उसकी मैं आलोचना करने की इच्छा करता हूँ। अष्ट महा प्रातिहार्यों से युक्त अरहंत, अष्ट गुणों से सम्पन्न तथा ऊर्ध्व लोक के मस्तक पर प्रतिष्ठित सिद्ध, अष्ट प्रवचन मातृकाओं से युक्त आचार्य, आचारांग आदि श्रुत ज्ञान का उपदेश देने वाले उपाध्याय और रत्नत्रय गुणों के पालन में रत सभी साधू परमेष्ठी की मैं सदा अर्चना करता हूँ, पूजा करता हूँ, वंदना करता हूँ, नमस्कार करता हूँ, मेरे दुःखों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, बोधिलाभ हो, सुगति में गमन हो, समाधि मरण हो और मुझे जिनेन्द्र भगवान के गुणों की प्राप्ति होवे।

वीलणमच्छोव्व मणो।
मन अति चिकने मच्छ की तरह है।

गोम्टेस भत्ति
(गोम्मटेश भक्ति)

-मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी

सिरिजिणसेण मुणीसरकहिदं
बाहुबली जिणमहिमावयणं ।
ठविदा भरयेणं जिणपडिमा
पोदणपुरठाणे बहुगरिमा ।।1।।

भावार्थ- बाहुबली जिन भगवान की महिमा का वर्णन श्री जिनसेन आचार्य ने इस प्रकार किया है- कि पोदनपुर स्थान पर बहुत गरिमा सहित बाहुबली जिनकी प्रतिमा भरत चक्रवर्ती ने स्थापित की है।

सुणिय काललला माया एवं
दंसणकरणे कुणदि सुभावं ।
जाव ण दंसणमहं करोमि
ताव ण दुद्धं मुहे धरोमि ।।2।।

भावार्थ- इस प्रकार के वर्णन को सुनकर माता काललला देवी प्रतिमा का दर्शन करने के लिए श्रेष्ठ भाव करती हैं कि जब तक मैं दर्शन नहीं करती हूँ तब तक मुख में दूध धारण नहीं करूँगी।

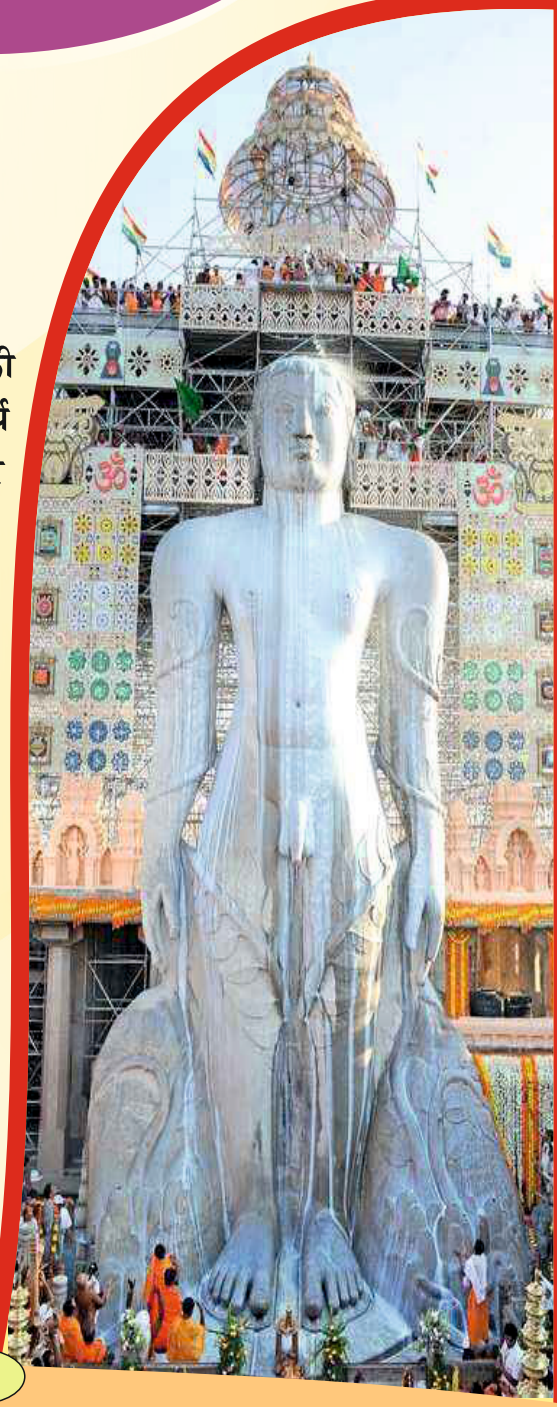

जणणीगहणं वदं सुदेणं, चामुण्डरायेणं जं णादं।
ताए अहिलासं पुरेज्ज, भावं तस्स मणम्मि होज्ज ।।3।।

भावार्थ- माँ ने व्रत ग्रहण किया है ऐसा जब कालला माँ के पुत्र चामुण्डराय को ज्ञात हुआ तो मन में भाव हुआ कि मैं अपनी माँ की अभिलाषा को पूर्ण करुँगा।

सह परिवारेणं सा जत्ता, पारंभा मग्गे सुववत्था।
पोदणपुर-मग्गं णहि पावइ, कडवप्पं खलु सो आगच्छइ ।।4।।

भावार्थ- मंत्री चामुंडराय ने परिवार सहित यात्रा प्रारंभ की। मार्ग में श्रेष्ठ व्यवस्था थी। जब पोदनपुर का मार्ग प्राप्त नहीं हुआ तो यह कटवप्र पहाड़ी पर आ जाता है।

णेमिचंदसिद्धंतगुरूस्स, चरणं पूजिय महिमं तस्स ।
पूदगिरिस्स सुणिय संतुट्ठो, तत्थ मदिरेसुं स पविट्ठो ।।5।।

भावार्थ- वहाँ आचार्य श्री नेमिचंद सिद्धांत चयवर्ती गुरु के चरणों की पूजा करके उनके मुख से उस पवित्र पर्वत की महिमा सुनकर मंत्री चामुण्डराय बड़े संतुष्ट हुए और वहाँ के मंदिरों में दर्शनार्थ प्रवेश किया।

मायाए सह सिविरं गच्छिय, चिंताभारेणं सो सयिय ।
पादो जग्गिय मायापुत्तं, परोप्परं संतट्ठं दिट्ठं ।।6।।

भावार्थ- दर्शनोपरांत माता के साथ अपने शिविर में जाकर 'मैं माँ की अभिलाषा को कैसे पूर्ण करूँ' इस चिंता के भार से वह सोए। प्रातः जाकर माँ-बेटे ने एक-दूसरे को संतुष्टि से देखा।

रत्तीए सुमिणं मए दिट्ठं, कहेदि माया सुदो वि सम्मं ।
चामुण्डय्या सह मायाए, सूरिसमीवं विणम्मदाए ।।7।।

भावार्थ- माँ कहती है कि मैंने रात में एक स्वप्न देखा है और पुत्र भी कहता है कि मैंने समीचीन स्वप्न देखा है। चामुंडराय अपनी माँ के साथ आचार्य देव के समीप विनम्रता से यह बात कहते हैं।

वुत्ते सूरी भासदि हं वि, सुमिणं पाससि कहेमि तं वि।
एगा देवी जक्खी दिट्ठा, कुसुमंडणी कहेदि सुतुट्ठा ।।8।।

भावार्थ- उनके कहने पर आचार्य गुरुदेव भी कहते हैं- कि मैं भी रात में एक स्वप्न देखता रहा। उसे मैं कहता हूँ स्वप्न में एक यक्षी देवी दिखाई दी। कुष्मंडिनी देवी संतुष्ट होती हुई कहती हैं कि-

पोदणपुरमग्गो अवरुद्धो, सप्पेहिं कण्डेहिं विद्धो।
सेलत्तो दक्खिणमुहठाणं, बाणपओगं किच्चा बाणं ।।9।।

भावार्थ- पोदनपुर का मार्ग तो सर्पों से अवरुद्ध है और अनेक कंटकों से सहित है। इस पर्वत के दक्षिण मुख स्थान से एक बाण का प्रयोग करो।

लग्गदि जत्थ तत्थ इगचित्तं, बाहुबलिसामिस्स विचित्तं ।
होहिदि भासिय एवं जादा, देवी सा खलु अंतज्झाणा ।।10।।

भावार्थ- जहाँ बाण लगे वहीं पर बाहुबली स्वामी का एक विचित्र चित्र होगा- इस प्रकार कहकर वह देवी अंतर्ध्यान हो गई।

अवरदिणे गुरुआणाए सो, बाणपओगं कादुं णध्दो ।
मंतणमोक्कारं उच्चारिय, चित्तं दिट्ठं बाणं मुंचिय ।।11।।

भावार्थ- अगले दिन मंत्री चामुण्डराय गुरु की आज्ञा से बाण का प्रयोग करने के लिए तैयार हुए। णमोकार मन्त्र का उच्चारण करके बाण छोड़कर देखा तो वहाँ एक चित्र दिखाई दिया।

सव्वे हरिसा विंझगिरीए, पस्सिय तुट्ठियभव्वसिलं ते ।
पडिमाघडणट्ठं खलु पच्छा, तेण पेसदा अणुयरभिच्चा ।।12।।

भावार्थ- विंध्यगिरी पर सभी हर्षित हुए। वहाँ पर भव्य शिला को देख संतुष्ट होकर मन्त्री चामुण्डराय ने अपने अनुचर, भ्रत्यों को प्रतिमा बनाने के लिए (एक शिल्पी की खोज में) भेजा ।

सयं धरिय सामण्णविभेस, सिप्पिगवेसणहेदू देसं ।
गच्छदि मंती मायाआणं, पूरणकामो ठाणं ठाणं ।।13।।

भावार्थ- स्वयं चामुण्डराय भी सामान्य भेष धारण करके शिल्पी की गवेषणा के लिए अन्य स्थान पर गए। वह मंत्री माँ की आज्ञा को पूर्ण करने की इच्छा से स्थान-स्थान पर जाते हैं।

पडिमा सा होदव्वा एसा, विस्से हवे ण कावि सरिसा ।
दंसणेण दुब्भाव-विणासो, सच्च-अहिंसा-संति-पयासो ।।14।।

भावार्थ- चामुण्डराय की इच्छा थी कि- वह प्रतिमा ऐसी हो कि विश्व में उसके समान कोई प्रतिमा न हो। जिसके दर्शन से दुर्भाव का विनाश हो जाए और सत्य, अहिंसा तथा शान्ति का प्रकाश हो।

जुगे जुगे जिणधम्मपहाणं, णिग्गट्ठं हिदमप्पपहाणं।
चागअकिंचणभावा हेदू, अप्पसंतिसुहकरणसुसेदू ।।15।।

भावार्थ- जो प्रतिमा यह कहे कि- युग-युग में जिन धर्म प्रधान है, निर्ग्रन्थ रहना ही हितकर है, आत्मा ही प्रधान है, त्याग और अकिंचन के भाव ही इसके लिए कारणभूत हैं तथा वे भाव ही आत्मा की शान्ति और सुख प्रदान करने के लिए श्रेष्ठ सेतु (पुल की तरह) है।

कहमवि पत्तो सिप्पिविसिट्ठो, णाममरिट्ठणेमि सो जेट्ठो।
कहिदं सिप्पि! कुणहि णिम्माणं, पाणवंतमिह तं पासाणं ।।16।।

भावार्थ- मंत्री चामुण्डराय ने किसी भी तरह शिल्पी विशिष्ट को प्राप्त किया। उसका नाम अरिष्टनेमि था तथा वह शिल्पकला में ज्येष्ठ था। मंत्री ने कहा-शिल्पी। यहाँ उस पाषाण पर प्रतिमा का निर्माण करो और उसे प्राणवन्त (जीवन्त) बना दो।

दाहिमि ते मुहजाचणदाणं, पुहपासाणसुवण्णपमाणं।
पस्सदि सिप्पी विम्महणेत्तो, सीकरणं तं लोहिदचित्तो ।।17।।

भावार्थ- तुम्हें मुँह मांगा इनाम दूँगा। जितना पाषाण इस मूर्ति के निर्माण में अलग होगा उतना स्वर्ण प्रदान करूँगा। शिल्पी विस्मित नेत्रों से देखता रह जाता है और उस कार्य को लोभितचित्त हुआ स्वीकार कर लेता है।

पारंभदि कज्जं सो सणियं, धरिय मणं एयंते एगं।
आवागमणं रूंधिय तत्थ, मग्गं रचिय सुदिट्ठपसत्थं ।।18।।

भावार्थ- वह शिल्पी अच्छी तरह दिखने वाले प्रशस्त मार्ग को बनाकर वहाँ पर अन्य लोगों का आवागमन रोककर, एकान्त में एकाग्र मन करके, कार्य को धीरे-धीरे प्रारम्भ करता है।

कइपयमासाणंतरमेगे, भरमाणो चुण्णं खलु सूदे।
माया आगच्छंता दिस्सदि, सिप्पिसुदं किं करोसि पुच्छदि ।।19।।

भावार्थ- कुछ मास पश्चात् एक दिन जब शिल्पी एक बोरे में बिखरा चूर्ण (पाषाणदि) भर रहा था तभी उसकी माँ आकर देखती है और अपने शिल्पिपुत्र से पूछती है, बेटा! यह तुम क्या कर रहे हो?

माआ! णत्थि इदं रयचुण्णं, पस्स पस्स एदम्मि सुवण्णं ।
णिक्खित्तं करमेवं भासिय, सूदे असमत्थो उट्ठाविय ।।20।।

भावार्थ- शिल्पी कहता है- माँ! यह धूलि-चूर्ण नहीं है। देखो! इसमें यह सोना है। ऐसा कहते हुए जब शिल्पी ने अपना हाथ उस बोरे में डाला तो वह उस हाथ को बाहर निकालने में असमर्थ हो गया।

णित्तेजो सिप्पी पुण रुवदि, माया पस्सदि रक्खदु कोक्कदि ।
पावभावफलमेदं पुत्त! धम्मे कज्जे लोहं मुंच ।।21।।

भावार्थ- शिल्पी निस्तेज हो गया और रोने लगता है। माँ देख रही है कि वह बुला रहा है और कह रहा है 'मुझे बचाओ'। माँ कहती है- हे पुत्र! यह पापभाव का फल है। तू धर्म कार्य में लोभ को छोड़ दे।

पस्स काललाजादं पुत्तं, महोदारचित्तं तु तुच्छं।
अत्थि सुदो मे जदि तो पुत्त! हत्थकलं मा विक्कसि अत्थ ।।22।।

भावार्थ- देख! एक तो वह काललला माता का महान उदारचित्त वाला चामुण्डराय जैसा पुत्र है और तुम जैसा तुच्छ पुत्र है। यदि तुम मेरे पुत्र हो तो, बेटे! इस कार्य में अपनी हस्तकला को मत बेचो।

जणणीवयणं सोच्चा सिप्पी. उरलोहं धोवदि सो दप्पी।
जाचदि खमं च आसीवादं, देउ करोमि हं णिब्बाधं ।।23।।

भावार्थ- माँ के वचनों को सुनकर दर्प से भरा वह शिल्पी अपने हृदय के लोभ को धो देता है। क्षमा याचना करता है और कहता है कि मुझे आशीर्वाद दो कि मैं इस कार्य को निर्बाध कर सकूँ।

णमोक्कारमंतस्स सुजावं, आइरियादि कुणदि जणजादं ।
जिणगंधोदगफासे देहे, संचारो सत्तीए अंगे ।।24।।

भावार्थ- उसी समय आचार्य नेमिचन्द्र गुरु अन्य लोगों के साथ णमोकार मन्त्र का श्रेष्ठ जाप करते हैं। जिनेन्द्र भगवान के गंधोदक का शरीर स्पर्श होने पर शरीर में शक्ति का संचार होने लगता है।

सिप्पी णीरोगो संजादो, सुहकज्जे लग्गदि सुहभावो ।
णिल्लोहो एयग्गमणेणं, महाभव्वपडिमाघडणट्ठं ।।25।।

भावार्थ- शिल्पी निरोग हुआ। शुभ भाव सहित होकर वह शिल्पी फिर शुभ कार्य में लग जाता है। वह लोभ रहित एकाग्रमन होकर उस भव्य प्रतिमा को घड़ने के लिए तैयार हो जाता है।

कदो समो रत्तीए दिवसे, पादे अंगुलिणहससिभासे ।
जंघा भुजा माहवीलित्ता, कुंचिदकेसा अंबुजणेत्ता ।।26।।

भावार्थ- रात दिन परिश्रम करता है। उसने चरणों में अंगुली के नखों को चन्द्रमा की आभा वाले, जंघा, भुजा माधवी बेलों से लिप्त, घुंघराले केश और कमल के समान नेत्र बनाये।

अणुवमसुंदरमहासरीरं, घडिदं रूवं णाहिगहीरं।
पडिमापुण्णं दिट्ठं हियए, हरिसोल्लासो णरणारीए ।।27।।

भावार्थ- अनुपम, सुंदर रूपवाला, गंभीर नाभि सहित महाशरीर बनाया। उस प्रतिमा को पूर्ण देखकर नर-नारी के मन में हर्ष उल्लास उत्पन्न हुआ।

छम्मासे हि मुत्तिपदिट्ठा, महाभिसेगो कदो विसिट्ठा।
गोम्टेससुहणामं दिण्णं, जय जय जय जिडपडिमापुण्णं ।।28।।

भावार्थ- छह मास में ही मूर्ति की प्रतिष्ठा हुई। बाद में अतिविशिष्ट महाभिषेक हुआ। 'गोम्टेश' शुभ नाम दिया। ऐसी जिन प्रतिमा का पुण्य सदा जयवन्त हो, जयवन्त हो, जयवन्त हो।

(दोहा छंद)

गोम्टे सजिणवरस्स मे भत्तीराएणत्थ।
कदा संथुदी भावदो गमणं होज्ज तत्थ ।।29।।

भावार्थ- मैंने यहाँ यह गोम्टेश जिनवर की स्तुति भाव से, भक्तिराग से की है। मेरी भावना है कि मेरा भी वहाँ गमन हो।

मुणिपणम्मसायर रचिय-भत्तिं इमं पढेउ।
सो सुरणरवरवंदिदो मोक्खं सिग्ध लहेउ ।।30।।

भावार्थ- मुनि प्रणम्य सागर रचित इस भक्ति को जो पढ़ेगा वह देव, मनुष्य से वंदित होता हुआ शीघ्र मोक्ष को प्राप्त करेगा।

(श्लोक)

भिवाणीणयरे कदा पुण्णा सुरयणा मए।
सुक्कपक्खे य मासम्मि मगसिरे दुवे तिही ।।31।।

भावार्थ- मैंने यह श्रेष्ठ रचना भिवानी नगर (हरियाणा) में मगसिरमास के शुक्ल पक्ष की दोज तिथी को भगवान नेमिनाथ जिनालय में पूर्ण की है। तदनुसार दिनांक 20-11-2017 है।

वड्ढमाण सामि थुदि
(वर्धमान स्वामी स्तुति)

-मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी

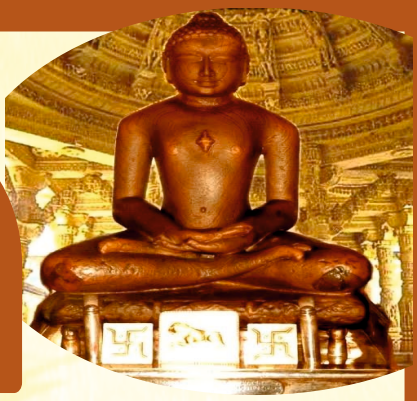

वड्ढमाणं जिणं धम्मतित्थंकरं, भव्वजीवाण सच्चं पहदेसगं।

भावार्थ- धर्म तीर्थंकर वर्धमान जिन हैं वह भव्यजीवों को सत्य पथ के देशक हैं।

पंचमे दुस्समे अम्हि काले तुमं, मे समक्खं सदा होहि वरभावणं।
वीयरागस्स चरणं हि सरणं परं, वड्ढमाणं जिणं धम्मतित्थंकरं ।।1।।

भावार्थ- इस पंचम दुःषम काल में आप मेरे समक्ष सदा रहो यही श्रेष्ठ भावना है। वीतराग के चरण ही परम शरण हैं।

जण्णहिंसा णिसिद्धा कदा जेण सा, जस्स माहप्पमेदं ण वचिगोयरा।
'जीवहि जीवयंतु' त्ति संदेसगं, वड्ढमाणं जिणं धम्मतित्थंकरं ।।2।।

भावार्थ- यज्ञ की वह हिंसा जिन्होंने निषिद्ध की, जिनकी यह महिमा वचन गोचर नहीं है। 'जिओ और जीने दो' का संदेश आपने दिया है।

दद्दुरो जस्स पूयासुभावं गदो, मिच्चुणा जो खणेणग्गसग्गी भवो।
चंदणा भत्तिबद्धा य पावइ सुहं, वड्ढमाणं जिणं धम्मतित्थंकरं ।।3।।

भावार्थ- मेंढक जिनकी पूजा के शुभभाव को प्राप्त हुआ जो मरकर क्षणभर में अग्र स्वर्ग में जन्म लिया। भक्ति से बद्ध चंदना सुख को प्राप्त होती है।

पूयचरणं हि चित्ते चिट्ठदु मुदा, सम्ममग्गं सुदिट्ठं लहेमु सदा।
इत्थमेवज्ज! भावस्स कुरु पूरणं, वड्ढमाणं जिणं धम्मतित्थंकरं ।।4।।

भावार्थ- मेरे चित्त में आपके पवित्र चरण प्रसन्नता से तिष्ठें। आपके द्वारा दिखाया गया सम्यक् मार्ग सदा प्राप्त करूँ। इस प्रकार ही हे! आर्य मेरे भावों की पूर्ति करो।

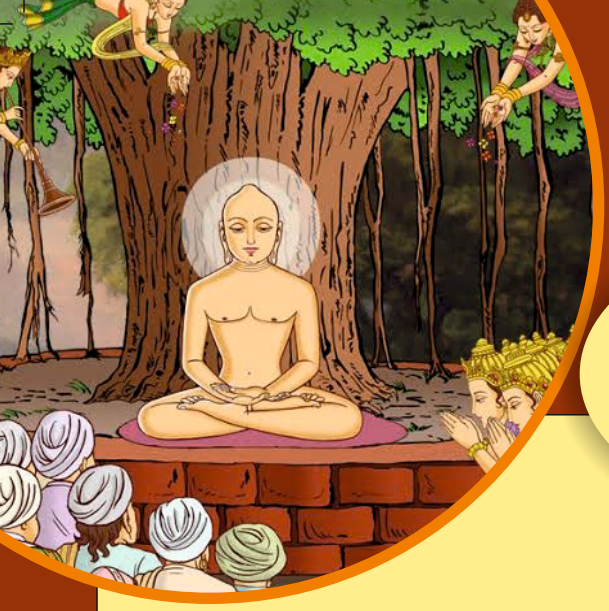

गोयमगणहर थुदि (गौतम गणधर स्तुति)

-मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी

जो वड्ढमाणो जिणवीयराओ, केवल्लधामो सयलत्थदिट्ठो।
तस्सेव मुक्खो पढमो हि सिस्सो, तं गोयमं वीयरदिं णमामि।।1।।

भावार्थ- जो वर्धमान जिनवीतराग, कैवल्यधाम तथा सकल पदार्थों के दृष्टा हैं, उनके ही मुख्य प्रथम शिष्य जो हैं, उन वीतरति (वीतराग) गौतम को मैं नमन करता हूँ।

वेदेगपाठी य पुराणविण्णू, अद्वेदमिच्छत्तकसायधारी।
सद्देसणं सो सुणिऊण सम्मं, णाणं धरेदिप्पणमामि सामिं।।2।।

भावार्थ- जो वेद के एक पाठी हैं, पुराण विज्ञ हैं, अद्वैत मिथ्यात्व और कषाय को धारण करते हैं, वह समीचीन देशना को सुनकर सम्यग्ज्ञान को धारण कर लेते हैं, ऐसे गौतमस्वामी को प्रणाम करता हूँ।

सिस्सेसु जो पंचसदेसु सामी, गोत्तेण वा गोयमणामधारी।
जो बम्हणो बम्हपरो विजादो, तमिंदभूदिं पणमामि णिच्चं।।3।।

भावार्थ- जो पाँच सौ शिष्यों के स्वामी हैं तथा गोत्र से गौतम नाम को धारते हैं। जो ब्राह्मण थे और ब्रह्म में तत्पर हुए थे, उन इंद्रभूति को नित्य प्रणाम करता हूँ।

वेदंतविण्णाणबलेण गव्वी, जिणेसरस्सप्पविलोयणेण।
मिच्छत्तभावं जहिदूण णाणं, लहेदि सम्मं पणमामि सामिं।।4।।

भावार्थ- वेदांत के विज्ञान के बल से जो गर्वी (घमंडी) थे किन्तु जिनेश्वर के देखने से मिथ्यात्व के भाव को छोड़कर सम्यग्ज्ञान को प्राप्त किए उन गौतम स्वामी को मैं प्रणाम करता हूँ।

अणेयबुद्धिप्पहुडीड्ढजुत्तं, चारित्त-सुद्धिप्पबलेण खिप्पं।
तवस्स णाणस्स फलं सुपत्तं, तमिंदभूदिं विणमामि सामिं।।5।।

भावार्थ- चारित्र की शुद्धि की प्रबलता से शीघ्र ही अनेक बुद्धि आदि ऋद्धियों से जो युक्त थे। तप और ज्ञान के फल के प्राप्त किए थे, उन इंद्रभूति गौतम स्वामी गणधर को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ।

दिव्वज्झुणिं जो सुणिऊण वीर-मुहारविंदस्स विणिग्गदत्थं।
अंतोमुहुत्तेण रचीअ गंथं तमिंदभूदिं विणमामि सामिं।।6।।

भावार्थ- जो वीर भगवान के मुख कमल से निर्गत अर्थ वाली दिव्य ध्वनि को सुनकर अंतर्मुहूर्त में ग्रंथ को रच दिए थे उन इंद्रभूति गणधर स्वामी को मैं प्रणाम करता हूँ।

जो बारसंगादिमहासुसत्थं, पुव्वेहि सागं रचिदं य जेण।
महासमुद्दं जिणदेसिदत्थं, तमिंदभूदिं विणमामि सामिं।।7।।

भावार्थ- जिनेन्द्र भगवान के द्वारा देशित जो अर्थशास्त्र महासमुंद्र है उसकी रचना जिन्होंने बारह अंग आदि महाश्रेष्ठ शास्त्र में पूर्वों के साथ की है, उन इंद्रभूति गौतम स्वामी को मैं प्रणाम करता हूँ।

वीरस्स णिव्वाणगदे दिणे हि, पच्चक्खणाणं लहिऊण जादो
परंपराए पढमो हि णाणी, तमिंदभूदिं विणमामि सामिं।।8।।

भावार्थ- वीर के निर्वाण वाले दिन ही जो प्रत्यक्ष ज्ञान को प्राप्त करके परंपरा से प्रथम केवलज्ञानी (अनुबद्ध केवली) हुए, उन इंद्रभूति को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ।

जो रागभावं चइऊण वीरे, वेरग्गकट्ठेण हि सुक्कझाणं।
झाउं य पावेदि णिजप्पभूदिं, तमिंदभूदिं विणमामि सामिं।।9।।

भावार्थ- जो वीर भगवान में रागभाव को छोड़कर वैराग्य की पराकाष्ठा से ही शुक्लध्यान को ध्याकर निज आत्मा के वैभव को प्राप्त कर लेते हैं उन इंद्रभूति गणधर को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ।

गुणी गणेसो य गुणाणुरागी, पुरा हि पंडित्तगदो विरागी।
पच्छा विसोहेदि च जस्स पण्णा, तमिंदभूदिं विणमामि सामिं।।10।।

भावार्थ- गुणी, गणधर, गुणानुरागी विरागी पहले तो पांडित्य को प्राप्त हुए थे किन्तु बाद में जिनकी प्रज्ञा शोभा को प्राप्त हुई उन इंद्रभूति गौतम स्वामी को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ।

''का वा कठिणचित्तस्स जिणसासणभत्तदा''
कठोर हृदय वाले जिनशासन के भक्त कैसे हो सकते हैं?

(मुनि श्री 108 प्रणम्य सागर जी)

भजन - पसण्ण करी थुदि
(प्रसन्न करने वाली स्तुति)

-मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी

पसीयंतु ते पसीयंतु मे, पसीयंतु ते पसीयंतु मे।
जिणा केवली धम्मतित्थंकरा, पसीयंतु ते पसीयंतु मे।।

भावार्थ- वे जिन, केवली और धर्म तीर्थंकर आप सबको प्रसन्न करें और मुझे प्रसन्न करें।

जे णिम्ममा जे णिरीहा सदा, जे चेयणाए विलीणा मुदा।
रमंति सदा सुद्धभावेसु जे, पसीयंतु ते पसीयंतु मे ।।

भावार्थ- जो निर्मम हैं और सदा निरीह हैं, जो चेतना में प्रसन्नता से विलीन होते हैं तथा जो शुद्धभावों में सदा रमण करते हैं, वे मुझे प्रसन्न करें।

सिद्धारिहा सूरिणो साहवो, अज्झावगा पंच परमेट्ठिणो।
सुहं दिंतु सरणोत्तमा मंगला, पसीयंतु ते पसीयंतु मे।।

भावार्थ- सिद्ध, अरिहंत, आचार्य, साधु और उपाध्याय ये पांच परमेष्ठी शरण है, उत्तम हैं, मंगल हैं, वे मुझे प्रसन्न करें।

पडिग्गहण विही (पड़गाहन विधि)

-मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी

हे सामि णमोत्थु दे! णमोत्थु दे! णमोत्थु दे!
अत्थ अत्थ अत्थ
तिट्ठ तिट्ठ तिट्ठ
मण सुद्धी, वयण सुद्धी, काय सुद्धी।
मण सुद्धी, वयण सुद्धी, काय सुद्धी,
आहार जल सुद्ध अत्थि।
भोयणागरे पवेसउ।
उच्चासणं गिण्हउ।

भावार्थ-
हे स्वामी नमोस्तु! नमोस्तु! नमोस्तु
अत्रो अत्रो अत्रो
तिष्ठो तिष्ठो तिष्ठो
मन शुद्धि, वचन शुद्धि,
काय शुद्धि।
मन शुद्धि, वचन शुद्धि,
काय शुद्धि,
आहार जल शुद्ध है।
भोजनशाला में
प्रवेश कीजिये।
उच्चासन
ग्रहण कीजिये।

चउवीस जिणभत्ति (चौबीस जिनभक्ति)

-मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी

जय उसह जिणेसर आदिदेव, जय अजिय सुरासुर पाय सेव।
जय संभव जिद भवसयल दोस, जय अहिणंदण आणंद कोस ।।1।।

भावार्थ- ऋषभ जिनेश्वर आदि देव जयवंत हों। सुर - असुर जिनके पद की सेवा करते हैं वह अजितनाथ जयवंत हों। संसार के सकल दोष जीतने वाले संभवनाथ जयवंत हों। आनंद के कोश अभिनंदननाथ जयवंत हों।

जय सुमइणाह सम्मइपयास, जय पउमप्पह सिवलोयवास।
जय जय सुपास णियभत्तपास, चंदप्पह-जिणवर चंदभास ।।2।।

भावार्थ- सन्मति का प्रकाश करने वाले सुमतिनाथ जयवंत हों। शिवलोक वासी पद्मप्रभ जयवंत हों। निज भक्तों के पास रहने वाले सुपार्श्वनाथ जयवंत हों। चन्द्रमा के समान चन्द्रप्रभ जिनवर जयवंत हों।

जय पुप्फदंत महिमामहंत, जय सीयल सीयलवयणकंत।
जय सेय सेयपहदरिससुज्ज, जय वासुपुज्ज तियलोयपुज्ज ।।3।।

भावार्थ- महिमामहंत पुष्पदन्त जिन जयवंत हों। शीतल वचनों के कान्त शीतलनाथ जयवंत हों। श्रेय पथ को दिखाने के लिए सूर्य समान श्रेयांसनाथ जयवंत हों। तीनलोक में पूज्य वासुपूज्य जिन जयवंत हों।

जय विमलजिणेसर विजियचित्त, जय जय अणंतजिण अइपवित्त।
जय धम्मणाह धम्माहिराय, जय संतिणाह जगसंतिदाय ।।4।।

भावार्थ- चित्त विजेता विमल जिनेश्वर जयवंत हों। अतिपवित्र अनंतजजिन जयवंत हों। धर्माधिराज धर्मनाथ जयवंत हों। जगत को शांति देने वाले शांतिनाथ जयवंत हों।

जय कुंथुजिणेसर दयावंत, जय अरजिणणाह विमुत्तिकंत
जय मल्लिजिणेसर विहदकम्म, जय मुणिसुव्वय जिण पत्तसम्म ।।5।।

भावार्थ- दयावंत कुंथुजिनेश्वर जयवंत हों। विमुक्ति के कान्त (प्रिय) अर जिननाथ जयवंत हों। कर्मनाशक मल्लि जिनेश्वर जयवंत हों। साम्य के पात्र मुनिसुव्रत जिन जयवंत हों।

जय णमिजिण भवतणमोहमोक्ख, जय णेमिजिणेसर सीलसोक्ख।
जय पासणाह सम्मेद मुत्त, जय वड्ढमाण देसिदजिणुत्त ।।6।।

भावार्थ- भवतन मोह से मुक्त नमिजिन जयवंत हों। शील सौख्य नेमि जिनेश्वर जयवंत हों। सम्मेद शैल से मुक्त पार्श्वनाथ जयवंत हों। कहे हुए जिन धर्म को ही कहने वाले वर्धमान जयवंत हों।

चउवीस जिणेसर वंदणेण, मम चित्तं णिम्मलयरं जेण
जिणवर भत्ती पुण्णेण होइ, जो करइ तियालं सुहं लेइ ।।7।।

भावार्थ- चूँकि चौबीस जिनेश्वर की वंदना से मेरा चित्त निर्मलतर होता है, जिनवर की भक्ति पुण्य से होती है जो यह भक्ति त्रिकाल करता है वह सुख प्राप्त करता है।

गोम्मटेस थुदि
(गोम्मटेश स्तुति)

-आचार्य श्री नेमिचन्द

विसट्ट- कंदोट्ट- दलाणुयारं,
सुलोयणं चंद - समाण - तुण्डं।
घोणाजियं चम्पय - पुप्फसोहं, तं
गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं।।1।।

भावार्थ- जिनके सुंदर नेत्र मृणाल सहित नीलकमल की पाँखुरी का अनुसरण करते हैं, जिनका मुख चन्द्र-मण्डल के समान सुशोभित है और जिनकी नासिका चम्पक पुष्प की शोभा को पराजित करती है, ऐसे उन गोम्टेश-बाहुबली को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ।

अच्छाय - सच्छं जलकंत - गंडं, आबाहु - दोलंत सुकण्ण पासं।
गइंद - सुण्डुज्जल - बाहुदण्डं, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं।।2।।

भावार्थ- जिनकी देह आकाश की भाँति निर्मल है, जिनके कपोल जल के समान स्वच्छ हैं, जिनके कर्ण पल्लव स्कन्धों तक दोलायित हैं, जिनकी दोनों भुजाएँ गजराज की सूण्ड के समान सुन्दर लगती हैं, ऐसे उन गोम्टेश-बाहुबली को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ।

सुकण्ठ - सोहा - जियदिव्व संखं, हिमालयुद्दाम - विसाल - कंधं।
सुपेक्ख-णिज्जायल सुट्ठुमज्झं, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं।।3।।

भावार्थ- अपने विलक्षण कण्ठ की शोभाश्री से जिन्होंने दिव्य शंख की शोभा-सुषमा को जीत लिया है, जिनका वक्षस्थल हिमालय की भाँति उन्नत और उदार है, जिनका कटिप्रदेश सुदृढ और प्रेक्षणीय है, ऐसे उन गोम्मटेश-बाहुबली को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ।

विंज्झायलग्गे पविभासमाणं, सिहामणि सव्व - सुचेदियाणं।
तिलोय - संतोसय - पुण्णचंदं, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं।।4।।

भावार्थ- विन्ध्यगिरि के अग्रभाग में जो अनुपम कान्ति से दमक रहे हैं, विंध्याचल के पर्वत में जो तपस्यालीन हैं और सब भव्य जनों के लिए जो वैराग्यरूपी प्रासाद के शिखर की शिखामणि हैं तथा तीन लोक के जीवों को आनन्द प्रदान करने में जो पूर्ण चन्द्रमा के समान हैं, ऐसे उन गोम्मटेश-बाहुबली को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ।

लयासमक्कंत - महासरीरं, भव्वावलीलद्ध - सुकप्परुक्खं।
देविंदविंदच्चिय - पायपोम्मं, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं।।5।।

भावार्थ- जिस कामदेव के सुविशाल शरीर पर चरण से भुजाओं तक माधवी लताएँ लिपटी हुई हैं, भव्यों के लिए जो कल्पवृक्ष जैसे फल प्रदाता हैं और देवेन्द्र-समूह जिनके चरण कमलों की अर्चना-पूजन करते हैं, ऐसे उन गोम्मटेश-बाहुबली को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ।

दियंबरो जो ण च भीइजुत्तो, ण चांबरे सत्तमणो विसुद्धो।
सप्पादिजंतुप्फुसदो ण कंपो, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं।।6।।

भावार्थ- जो दिगम्बर श्रमण हैं, सप्तभय से विप्रमुक्त हैं, अभीत हैं, वस्त्रवल्कलादि पर आसक्त मन वाले नहीं हैं और विषधर-नागराजादि जन्तुओं से दुरावृत होने पर भी जो अकम्प-अविचल हैं, ऐसे उन गोम्मटेश-बाहुबली को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ।

आसां ण जो पेक्खदि सच्छदिट्ठि, सोक्खे ण वंछा हयदोसमूलं।
विरायभावं भरहे विसल्लं, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं।।7।।

भावार्थ- जो स्वस्थ (सम) दृष्टि होने से आसा (तृष्णा) को पुष्ट नहीं करते, स्वदोषों के समूल विनष्ट होने से जिन्हें सांसारिक सुखों की वांछा नहीं रही और अग्रज भरत के प्रति जो संज्वलन मान था, वह अब वैराग्य में परिणत हो गया है, ऐसे उन गोम्मटेश-बाहुबली को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ।

उपाहिमुत्तं धण - धाम - वज्जियं, सुसम्मजुत्तं मय - मोहहारयं।
वस्सेय- पज्जंतमुववास-जुत्तं, तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं।।8।।

भावार्थ- जो समस्त उपाधि, परिग्रह से मुक्त हैं, धन और धाम का जिन्होंने अन्तरंग से ही परित्याग कर दिया है, मद एवं मोह, राग और द्वेष जिन्होंने तप के द्वारा जीत लिया है, जो क्षायिक भाव में स्थित हैं तथा पूरे एक संवत्सर (वर्ष) तक जिन्होंने अखण्ड उपवास व्रत किया है, ऐसे उन गोम्मटेश-बाहुबली को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ।

विणीद - भावेण धरेदि भारं
वदस्स सिस्सस्स महाबली जो।
सो दिव्ववेज्जो भवदुक्ख णासी
आरोग्गबोहिं खलु देउ सत्तिं।।

चउवीसतित्थयर थवो
(चौबीस तीर्थंकर स्तव)

– गौतम गणधर विरचित

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवलीअणंतजिणे।
णरपवरलोयमहिए विहुयरयमले महप्पण्णे।।1।।

भावार्थ- जिनवर, तीर्थंकर, केवली, अनंत जिनों तथा श्रेष्ठ मुनियों से लोक में पूजित रज-मल से रहित महान आत्माओं की मैं स्तुति करता हूँ।

लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे।
अरहंते कित्तिस्से चउवीसं चेव केवलिणो।।2।।

भावार्थ-लोक को प्रकाशित करने वाले, धर्म के तीर्थंकर, जिनेंद्र भगवान,अरहंत, चौबीस तीर्थंकर केवली का मैं वंदन करता हूँ।

उसहमजियं च वंदे संभवमभिणंदणं च सुमइं च।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वंदे।।3।।

भावार्थ- मैं ऋषभनाथ, अजितनाथ की वंदन करता हूँ। सम्भव, अभिनंदन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपार्श्व और चंद्रप्रभ जिनदेव की वंदना करता हूँ।

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च।
विमलमणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि।।4।।

भावार्थ- मैं सुविधिनाथ अर्थात् पुष्पदंत, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्य, विमल,अनंत, धर्म, शान्ति भगवान की वंदना करता हूँ।

कुंथुं च जिणवरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं।
वंदामि रिट्ठणेमिं तह पासं वड्ढमाणं च।।5।।

भावार्थ-कुन्थु, जिनश्रेष्ठ अरनाथ, मल्लि, सुव्रत, नमि, अरिष्टनेमि, पार्श्व और वर्द्धमान प्रभु की मैं वंदना करता हूँ।

एवं मए अभित्थुया विहुयरयमला पहीणजरमरणा।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु।।6।।

भावार्थ- इस प्रकार मेरे द्वारा स्तुत रज-मल से रहित, जरा - मरण से रहित, चौबीस तीर्थंकर जिनवर मुझे प्रसन्न करें।

कित्तिय वंदिय महिया एदे लोकोत्तमा जिणा सिद्धा।
आरोग्गणाणलाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं।।7।।

भावार्थ-यह लोकोत्तम जिनेन्द्र देव, सिद्ध भगवान जो कि सभी से कीर्तन, वंदन, पूजन को प्राप्त हैं वे सभी मेरे लिए रोगरहित, ज्ञानलाभ, बोधि और समाधि को देवें।

चंदेहिं णिम्मलयरा आइच्चेहिं अहियपहासत्ता।
सायरमिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु।।8।।

भावार्थ- चंद्रमा के समान निर्मल, सूर्य से भी अधिक प्रभावान, सागर के समान गंभीर सिद्ध भगवान मुझे सिद्धि प्रदान करें।

जत्थ रुई तत्थ मग्गो वि।
जहाँ रुचि है वहाँ रास्ता भी है।

वीयराय भत्ति
(वीतराग भक्ति)

-मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी

हे वीयराय भयवंत विहो सव्वण्हु-हियंकर संति पहो।
अण्णाणं हर जगजणमणहर ! अवमाणं वेरं पावं हर मंगलमय !
मंगलदाणकरं तव जुगचरणं सरणं सरणं ।।1।।
हे वीयराय .....

भावार्थ- हे वीतराग भगवान विभो! सर्वज्ञ हितंकर शान्तिपथ! मेरे अज्ञान को हर लो! जगत के जन का मन हरण करने वाले भगवन्! अपमान, बैर, पाप को हर लो। हे मंगलमय! आपके युगल चरण शरण हैं, शरण हैं और मंगलदान करने वाले हैं। हे वीतराग....

जीवा दु महामदमोहजुदा, जणणं मरणं जणणं मरणं
कुव्वंति सया बहुजोणिगदं, तव जुगचरणं मदमोहहरं ।।2।।
हे वीयराय .....

भावार्थ- जीव तो महामद और मोह से युक्त हैं। वे सदा अनेक योनियों को प्राप्त हुए जन्म, मरण, जन्म, मरण करते रहते हैं। आपके युगल चरण मद और मोह को हरण करने वाले हैं। हे वीतराग....

जीवाण सया देहासत्ती, विसयासत्ती ण कदा तित्ती।
भयवंत जिणेसर मोक्खपहो, कुव्वदि णियतित्तिं जगमेत्तिं ।।3।।
हे वीयराय .....

भावार्थ- जीवों को सदा देह में आसक्ति है, विषयों में आसक्ति है लेकिन कभी भी तृप्ति नहीं है। हे भगवान जिनेश्वर का मोक्षपथ ही निज तृप्ति और जगत में मैत्री करता है। हे वीतराग....

पागद धजगीद
(प्राकृत ध्वज गीत)

-मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी

पंचवण्णमय जेण्हधजो जयदु जयदु जयदु,
सव्व - भव्व - मंगलयारी जयदु जयदु जयदु।।1।।

भावार्थ- पंच वर्णमय जैन ध्वज जयवंत हो, जयवंत हो, जयवंत हो। सभी भव्यों को मंगलकारी वह ध्वज जयवंत हो, जयवंत हो, जयवंत हो।

सव्व विग्घणासणयारी जयदु जयदु जयदु,
जिणमदमंगलचिण्हं एदं जयदु जयदु जयदु ।।2।।

भावार्थ- सभी विघ्नों को नाश करने वाला वह ध्वज जयवंत हो, जयवंत हो, जयवंत हो। जिनमत का मंगल चिन्ह यह ध्वज जयवंत हो, जयवंत हो, जयवंत हो।

अणेयंतमयधम्मो लोए जयदु जयदु जयदु,
सच्च-अहिंसा-विजय पडागा जयदु जयदु जयदु ।।3।।

भावार्थ- लोक में अनेकान्तमय धर्म का ध्वज जयवंत हो, जयवंत हो, जयवंत हो। सत्य, अहिंसा की विजय पताका जयवंत हो, जयवंत हो, जयवंत हो।

मंगलमय जिणसासण चिण्हं जयदु जयदु जयदु,
घरे घरे जिणधम्म - पडागा जयदु जयदु जयदु ।।4।।

भावार्थ- मंगलमय जिनशासन का चिन्ह जयवंत हो, जयवंत हो, जयवंत हो। घर - घर में जिनधर्म पताका जयवंत हो, जयवंत हो, जयवंत हो।

भारददेसे संतिके दू जयदु जयदु जयदु,
एसा विजयंती विस्सम्मि जयदु जयदु जयदु ।।5।।

भावार्थ- भारतदेश में शांति की ध्वजा जयवंत हो, जयवंत हो, जयवंत हो। यह ध्वजा विश्व में जयवंत हो, जयवंत हो, जयवंत हो।

णवदेवदा थुदि (नवदेवता स्तुति)

–मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी

णमो णमो णमो णमो, णमो जिणाण ते णमो
सुरक्ख रक्ख रक्ख मां, जिणेस तुं गणेस तुं
सुरासुरेहि वंदिदा, मुणीसरेहि कामिदा
सुभव्वजीवसंथुदा, णमामि सिद्धसंपदा।।1।।
सुहं दिसंतु मे जिणा...

भावार्थ– जिनों को नमस्कार हो – हे जिनेश! हे गणेश ! आप मेरी अच्छी तरह रक्षा करो, रक्षा करो, रक्षा करो। जो सुर-असुरों से वंदित हैं तथा मुनीश्वरों द्वारा कामित हैं, श्रेष्ठ भव्य जीवों के द्वारा जो स्तुत हैं, उस सिद्ध संपदा को मैं नमस्कार करता हूँ।।1।।

तवस्स वीरियस्स खं, सुणाणदंसणस्स जे
चरित्तधम्मयस्स पालगा जयंतु सूरिणो।
मणम्मि सव्वसत्थसार-भूदतच्चधारगा
मुणंति पाठगा वुसं लसंतु धम्मदेसगा।।2।।
सुहं दिसंतु मे जिणा...

भावार्थ– जो तप के, वीर्य के, श्रेष्ठज्ञान, दर्शन के, चारित्र धर्म के जो पालक हैं, वह वास्तव में सूरी (आचार्य परमेष्ठी) जयवंत हों। समस्त शास्त्रों के सारभूत तत्व के धारक, पाठक धर्म को जानते हैं, ऐसे धर्म देशक सदा शोभायमान रहें।।2।।

गजेहि साहिमाणगा समं सिहेहि पोरुसा
महीव - खंतिमाणुसा सया जयंतु साहवो
जिणिंद-संपणीद-भारदी जिणागमो महा
खमादि-धम्म-देसणा जिणुत्त-धम्म-सोहणा।।3।।
सुहं दिसंतु मे जिणा...

भावार्थ- जो गज के समान स्वाभिमान को प्राप्त हैं, तथा सिंह के समान पौरुष प्रधान हैं। पृथ्वी के समान क्षमा वाले मनुष्य साधु हैं, वे सदा जयवंत रहें। जिनेन्द्र भगवान के द्वारा कही गई भारती ही महान जिनागम है। क्षमादि धर्म की देशना जिनेन्द्र भगवान के द्वारा कहा हुआ शोभनीय धर्म है।।3।।

जिणालया अकिट्टिमा य किट्टिमा जयंतु ते।
जिणिंदबिंबभासुरा महीतले जयंतु ते।
सणादणा णवावि देवदा सया जयंतु ते।
सुमंगला भवंतु मे सुमंगला भवंतु मे।।4।।
सुहं दिसंतु मे जिणा...

भावार्थ- वे अकृत्रिम और कृत्रिम जिनालय जयवंत हों, पृथ्वीतल में जिनेन्द्र भगवान के बिम्बों की शोभा सदा जयवंत हों। वे नव ही देवता सनातन हैं, वे सदा जयवंत हों, मेरे लिए सदा मंगल हों, मंगल हों।।

अर्हं योग के पाँच अंग

मुद्दाविसेसे किरयंगमादि सेथिल्लदेहे विदियंगभूदं।
सप्पाणसत्तीदु णिरोगपुत्ती पमादमुत्तेण विरागदिट्ठी।।

बारह भावणा (बारह भावना)

-मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी

1. अणिच्चभावणा

सरीर-संबलं य ते सरीरसोट्ठवं य ते,
सरीरसुंदरं य ते सरीररूवदा य ते।
दिढं पदक्कमं य ते सुदूर-चालणं य ते,
ण सस्सदं हवे कदा ण सस्सदं हवे कदा।।1।।

वरं च सोक्खमिंदियं वरं च सोक्खमित्थिदं,
वरं च पुत्तपुत्तियं वरं धणं च वाहणं।
वरं गिहं समुण्णदं वरं पदं सुणायगं
ण सस्सदं हवे कदा ण सस्सदं हवे कदा।।2।।

अणिच्चभावणा वरा....

2. अरक्खभावणा

ण पुण्णसेणिगं बलं ण अट्ठसेणिगं बलं,
ण पुट्ठदेहवंतमल्लरक्खपाल-संजुदं।
णरो ण रायणायगो ण बंधुबांधवागुलं
णु मिच्चुणा हदे खणे सहायगं सहायगं।।3।।

ण मंतसिद्धदेवदा ण तंतकूरकज्जदा
अणेयजंत-मंतजुत्तणीर-धारपादिदा।
महातवस्स इड्ढियस्स वा बलेण संजुदा
णु मिच्चुणा हदे खणे सहायगं सहायगं।।4।।

अरक्खभावणा वरा....

3. भवस्सभावणा

कदा य णारगे भवे विपच्चदे विछिज्जदे
तिरिक्खजम्मणं य गिण्हदूण णिच्च बाहदे।
भवे णरस्स सोक्खकंखिदे वि दुक्खसंतदी
सुहं कहिं वि णत्थि णत्थि लेसमेत्तियं सुहं।।5।।

सुरिंद-देवणायगे णरिंदविंदणायगे
पभूदलोयसंपदा-समूह-मुक्खसामिगे।
दु सेट्ठिहासदिट्ठिदे य चक्कवट्टिये ट्ठिदे
सुहं कहिं वि णत्थि णत्थि लेसमेत्तियं सुहं।।6।।

भवस्स भावणा वरा.....

4. एयत्तभावणा

पजायदे हि एगगो मरेदि एगगो तहा
पभूंजदे य एगगो सुहं दुहं विणासणं।
सुदिग्ध-कालणिम्मजोणिजम्ममिच्चु-भुंजणं
अहो हि एगगो हि एगगो हि एगगो भवे।।7।।

कलत्तपुत्तहेउणा करेदि पंचपावयं
धणत्थमत्थ सो महावहादिमुच्छणाउलं।
फलेण तस्स संपडेदि णारये णिगोदये
अहो हि एगगो हि एगगो हि एगगो भवे।।8।।
तुमं सया हि एगगो.....

5. अण्णभावणा

सरीरमादुबंधुमित्तपुत्तलाहलालसा
हि जीवदो सया पुहंति पुव्व जम्मवासणा।
तहा वि मण्णदे णरो विमूढमाणसो भवे
ममेयमेव मा विणा भवे ण का वि साहणा।।9।।

णियस्स कम्म भावबंधतप्फलाणुसारिणी
सुदादिबंधुबांधवस्स जोजणा सुविज्जदे।
वीसादहस्सभावदो तहा वि तम्मयेण सो
विभुंजदे णरो हि तं ण अण्णरूवदो कुही।।10।।
वरा हि अण्णभावणा....

6. सरीरभावणा

सरीरमेव पुव्व-कम्म-पागदाणमस्सयं
कहिं सुहं कहिं दुहं कहिं मुदं य जम्मयं।
सरीर-मेव कारणं भयस्स मारणस्स वा
मदं तदो हि हेयमेव हेयमेव सव्वदा।।11।।

खणे बलं खणे विभंगुरं खणे सरोगदं
खणे सुसुंदरं खणे विरूवगं णिरामयं।
खणे हि रागकारणं खणे य रोसकारणं
सया समाणरूवदो ण दिस्सदे विचेट्ठिदं।।12।।
सरीरभावणा वरा....

7. आसवभावणा

सरीरभावदव्ववाचि-चित्तचेट्ठिदेहि वा
पमादमिच्छजोगपावकोहपच्चयेहि वा
णिरंतरं समासवो असेसजीवरासिगे
असेसकम्मसव्वभेदजादिगस्स विज्जदे।।13।।

णिमज्जदे पडेदि दुक्खसायरे भवे सया
फलेण आसवस्स पंचभेदगे पुणो पुणो।
विचिंतिदे जदा हि मंदमोहभावसंजुदो
तदा विभेदाणाणसंबलेण होदि वंचिदो।।14।।

समासवस्स भावणा...

8. संवरभावणा

जिणिंदतित्थरोचिदस्स मिच्छभावसंवरो
वदेसु तप्परस्स वा असंजदस्स संवरो।
विरागभावविदस्स भो कसायसंवरो
णिरुद्धजोगिणो हवेदि तिण्णिजोगसंवरो।।15।।

तिगुत्तिरुद्धमाणसेण साहुणा णिजम्मि जा
रुई पसारिदा तदो ण पावपुण्णकंखणा।
णिजप्परक्खणस्स सो विही जिणागमे सदा
सुसंवरोअसेसकम्मरोहणेण जायदे।।16।।

सुसंवरस्स भावणा.....

9. णिज्जराभावणा

अणिट्ठयारि मे इणं इणं दु इट्ठयारि मे
जले चलेदि माणसे य राग-रोसवाउणा।
जदा तदा ण संतिचित्तदा कदा हवे अरे।
कहिं ण णिज्जरा अहो कहिं ण णिज्जरो अहो।।17।।

ण वेसमेत्तधारणेण साहुसंगमेण णो
महोग्गणेगभेयभिण्णाताव-वाहणेण णो।
णिजप्पसाहणाविहीण-साहुणो समं विणा
कहिं ण णिज्जरा अहो कहिं ण णिज्जरा अहो।।18।।

वराहि कम्मणिज्जरा ....

10. लोयभावणा

ण केण माणुसेण बम्हणा सुरेण णिम्मिदो
अहो य उड्ढमज्झातिण्णिभेददो पदिट्ठिदो।
अकिट्टिमो वि सस्सदो पडिक्खणं विणट्ठगो
जहा जिणेहि दिस्सदे तहा जिणेहि भण्णिदो।।19।।

जगो घणादितिण्णि-वाउवेदट्ठिदो सयंट्ठिदो
सुजीवपुग्गलादिछव्विहेहि सुट्ठु पूरिदो।
वये वि जम्मणे वि धोव्वगेहि णिच्चसंजुदो
विचित्तभावसंगदो इमो मुणीहि चिंतिदो।।20।।

सुलोयभावणा वरा....

11. बोहिदुल्लहाभावणा

णिगोदथावरत्तासत्तापुण्णासव्वदे हदा
मई सुदस्स णाणदा य णम्मदा य रम्मदा।
विभूदिसोक्खसंपदा य धम्म-कज्जमुक्खदा
इमा य उत्तरोत्तरा सुदुल्लहाप्पबोहिदा।।21।।

परेण भिण्णरूवदो य सव्वहा णिजम्मि या
रुई पईदिवेदणा य णिच्छयो य धारणा।
समाहिभावणा सया हि णिव्वियप्पसाहणा
सुबोहिदुल्लहा मदा सुबोहिदुल्लहा मदा।।22।।

सुबोहिदुल्लहा वरा....

12. धम्मभावणा

जिणेहि बेविहेहि भासिओ वुसो हियंकरो
असंगचित्तधारगाण संजदाण भूसिदो।
गिहत्थकम्मपालगाण दिट्ठिमोहणूणगो
सुसग्गमोक्खदायगो परत्थ अत्थ सोक्खदो।।23।।

समुत्तमो खमाजुदो य मद्दवो य अज्जवो
सउच्चसच्चसंजमादि- तावचागसंजुदो।
अकिंचणो य बंभचेरभेदगो दहा मदो
असेसलोयमंगलोत्थ सज्झगोवि साहणो।।24।।

सुधम्मभावणा वरा.....

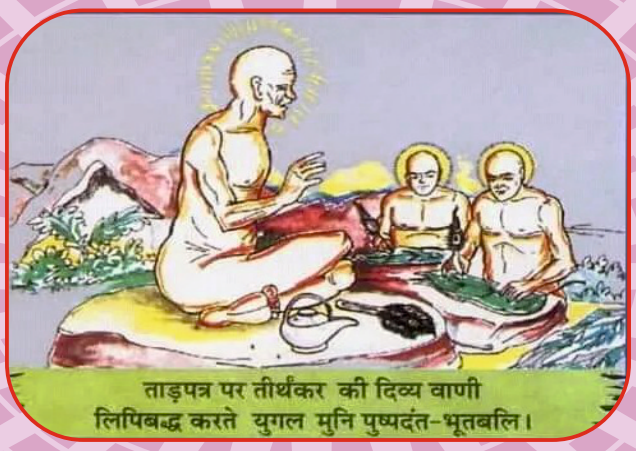

ताड़पत्र पर तीर्थंकर की दिव्य वाणी
लिपिबद्ध करते युगल मुनि पुष्पदंत-भूतबलि।

सुद पंचमी पूया
(श्रुत पंचमी पूजा)

-मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी

(आर्या-छन्द)

स्थापना

केवलणाणतरूणं सुयणाणस्साराहणा-सुवीयं।
सुयपंचमीसपज्जं करेमि भावेण सड्ढाए॥
जीवट्ठाणं खुद्दा-बंधो य बंध सामित्तविचयो य।
खंडो य वेदणाअ वग्गणाखंडो महाबंधो॥

ऊँ ह्रीं अर्हं सुयणाणदेव ! अत्थ अवयर अवयर....
ऊँ ह्रीं अर्हं सुयणाणदेव !अत्थ तिट्ठ-तिट्ठ .....
ऊँ ह्रीं अर्हं सुयणाणदेव ! अत्थ मम संणिहिदो भव भव वस....

जम्माइमरणहेऊ, मिच्छाणाणाइ जिणेणुत्ताइं।
कारणकज्जविणासो, भवे जलं समप्पामि॥

ऊँ ह्रीं अर्हं जम्मजरामिच्चुविणासणस्स जलं णिव्ववामि त्ति साहा।

तावत्तयेण जीवा, भमंति भवसायरे पुणो णिच्चं।
मलयाचलचंदणयं, अतावहरं तेण अच्चेमि॥

ऊँ ह्रीं अर्हं संसारतावविणासणस्स चंदणं णिव्ववामि त्ति साहा।

अक्खय-पदमविणासि, सिद्धाण समुज्जलं समुब्भासि।
धवलक्खयाण पुंजं, णाणसमक्खं समच्चेमि॥

ऊँ ह्रीं अर्हं अक्खयपदपत्तस्स अक्खयं णिव्ववामि त्ति साहा।

पुप्फं खलु गंधड्ढं, तव तणचरण-गंधदो णाहियं।
तुच्छाणि ताणि चरणे, णिवदंति अहोमुहेण अहो॥

ऊँ ह्रीं अर्हं कामवाणविद्धंसणस्स पुप्फं णिव्ववामि त्ति साहा।

चउव्विहो आहारो, उहयासंजमयरो य जीवेसु।
छक्खंडाणपदेसुं, तेण सयं समागदो य चरू॥

ऊँ ह्रीं अर्हं खुहारोगविणासणस्स णेवेज्जं णिव्ववामि त्ति साहा।

मोहंधयारहरणे, णत्थि समत्था जदो पदीवसिहा।
लज्जाए लग्गंता, णाणसमीवं विसोहेदि॥

ऊँ ह्रीं अर्हं मोहंधयारविणासस्स दीवं णिव्ववामि त्ति साहा।

सुयणाणेण हि जीवो, कम्मिंधणवणं डहेदि णिज्जरणं।
भत्तीए कुणदि जम्हा, तम्हा धूवं खिवामि मुहु॥

ऊँ ह्रीं अर्हं अट्ठकम्मदहणस्स धूवं णिव्ववामि त्ति साहा।

सुयणाणस्स पयासो, दंसण-चरणं समं पसाहेदि।
सुयणाणफलं सोक्खं, णाणमणंतं य कंखामि॥

ऊँ ह्रीं अर्हं मोक्खफलपत्तस्स फलं णिव्ववामि त्ति साहा।

जलचंदणादिदव्वं, सव्वं मेलिय विणिम्मिद- समग्घं।
सुयपूयाकरणट्ठं, सुयभत्तीए समप्पामि॥

ऊँ ह्रीं अर्हं अणग्घपदपत्तस्स अग्घं णिव्ववामि त्ति साहा।

जयमाला

(भुजंगप्रयात-छंद)

जदा पुव्वणाणं य अंगस्स णाणं, विलुत्तं मुणीसुं तदंसस्स णाणं।
सुसोरट्ठदेसम्मि उज्जंतसेले, गुहाए ट्ठिदस्सेगसूरिं सु पत्तं ॥1॥

(तोटक-छंद)

धरसेण महाइरियस्स मणे, सुदणाणसुरक्खण-चिंतणदा।
महिमाणयरीमुणि-मेलणगे, लहु पेसिदपत्तफलेण तदा॥ 2॥
मुणिणो य दुवे बहुजोग्गमई, कुसला सुयधारणवायणगा।
लहिऊण सुलक्खणजुत्तजणे, हियए बहुतोसणमेदि गुरू॥3॥

(भुजंगप्रयात-छंद)

परिक्खा कदा तेण विज्जा पदिण्णा, तदो सिद्धविज्जा गुरूणं समक्खे।
पढंता सुणंता मणे तं धरंति, समत्ते सुगंथे थुदा पूजिदा ते॥4॥
विहारं करंता गदा दूरदेसे, कदा तेहि सिद्धंत - गंथस्स पुत्ती।
तदो सावयेहिं महासुत्तपूजा, महोच्छाहपुव्वं पसिद्धा सुभूदा॥5॥

ऊँ सुदणाणदेवयस्स जयमाला पुण्णग्घं णिव्ववामि त्ति साहा।

(आर्या-छंद)

सुयणाणदेवपूया, केवलणाणं सुहं पयच्छंतु।
छक्खंडाणं णाणं, भावसुदं भवे-भवे होदु॥

इति आसीवादं पुप्फंजलिं खिवे।

सुयपंचमीथुदि (श्रुत पंचमी स्तुति)

-मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी

जयउ सुयदेवदा
सुगुरुमुहणिग्गदा ।
जयउ सुयपंचमी
णाण चिंतामणी ।।
जो जिणणाणदिवायर-पूयं
भत्तिवसेण करेदि विमाणी ।
सो खलु जेट्ठसिदस्स तिहीए
पंचमवासर-मिच्छदि णाणी।।
जयउ सुयदेवदा.....णाण चिंतामणी ।
भूयबलिस्स ससंघसुमज्झे
आगमपूयण- मच्चणकज्जं ।
पव्वमहोच्छवमत्थ कुणंति
भव्वजणा सुयपंचमिणामा।।
जयउ सुयदेवदा.....णाण चिंतामणी ।
पायदसद्दमयी जिणवाणी
आइरियाण जए हिययारी ।
सुत्तमयी परमागमभासा
लोयविलोयणलोयणयारी।।
जयउ सुयदेवदा.....णाण चिंतामणी

णंदीसर भत्ति (नंदीश्वर भक्ति)

(चौपाई)

तं जिण सयलसमत्थं लोगे, तं कहसि भोगे खलु रोगे ।
हेयमहेयं तहा पयाससि, णहदो णंतगुणं खलु भाससि ॥1॥

तव वयणे सयलट्ठं दिस्सइ, तव णाणं परमाणुं पेक्खइ ।
सयल वत्थुसारं तव णाणं, जीवाजीव विभायणदाणं ॥ 2 ॥

कप्पतरु जिणवर! ते पूया, सयलदुक्खहारी सा सेया ।
जो जिणबिंबं थुणइतियालं, तस्स जगं णिस्सार-पलालं ॥3॥

तत्तो अण्णो वरो ण कोई, जो झायइ तं मण्णे जोई ॥
णिक्कारण-विज्जो तं सुद्धो, रत्तिदिवं तं सदा पबुद्धो ॥4॥

जिणपूया सासयसुहहेऊ, भववइतरिणीतरणे सेऊ ।
जिणपूया मे सरणं णिच्चं तं जाणइ सो जाणइ सच्चं ॥5॥

दोहा

जिणपूया सुहदाइणी सग्गसुहं वि देइ ।
मिच्छामदमइणासिणी सा पावं वि हरेइ ॥6॥

आर्या

फागुणमासे आसाढे य, कत्तियमासे अट्ठदिणे ।
णंदीसरदीवे गच्छंति, देवी- सव्व-सुरादिगणे ॥7॥

महामहं खलु पूजं रचिउं, सोहग्गं मण्णंति सुरा ।
अज्जवि अज्जेखंडेकरिउं , उल्लसंतितं सव्वणरा ॥8॥

णंदीसर-महिमावण्णेदुं, णत्थि समत्थो सुरगुरु वि।
कहंणरोसक्कदितंकादुं, रिसीमुणी अइपण्णोवि ॥9॥

भत्तिवसादो णेहवसादो, जहासत्ति णिजबुद्धीए ।
जिणवरपूया मिच्छाबोहि - दंसणणासी सोहीए ॥10॥

अट्ठदिवसपज्जंतं जो जो, करइ विहाणं भत्तीए ।
सा णारी सो णरो वि सोक्खं, पदं सुपावइ मुत्तीए ॥11॥

अंचलिका

इच्छामि भंते ! णंदीसरभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, णंदीसर-दीवम्मि, चउदिस विदिसासु अंजण-दधिमुह-रदिकर - पुरुणगवरेसु जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तिसुवि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर- जोइसिय-कप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेहिं गंधेहि, दिव्वेहिं पुप्फेहि, दिव्वेहिं धूव्वेहि, दिव्वेहिं चुण्णेहि, दिव्वेहिं वासेहि, दिव्वेहि ण्हाणेहि आसाढ -कत्तियफागुण-मासाणं अट्ठमिमाइं काऊण जाव पुण्णिमंति णिच्चकालं अंचंति, पूजंति, वंदंति, णमंसंति, णंदीसर महाकल्लाणं करंति अहमवि, इह संतो तत्थसंताइं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

जम्मकल्लाणभत्ति (जन्म कल्याण भक्ति)

- आचार्य यतिवृषभ विरचित

तीर्थङ्करों के अवतरण स्थान

सव्वत्थसिद्धि-ठाणा, अवइण्णा उसह-धम्म-पहुदि-तिया।
विजया णंदण-अजिया, चंदप्पह वइजयंतादु ॥1॥

अपराजियाभिहाणा, अर-णमि-मल्लीओ णेमिणाहो य ।
सुमई जयंत-ठाणा, आरण-जुगला य सुविहि-सीयलया ॥2॥

पुप्फोत्तराभिहाणा, अणंत-सेयंस-वड्ढमाण-जिणा ।
विमलो य सदाराणद-पाणद-कप्पा य सुव्वदो पासो ॥3॥

हेट्ठिम-मज्झिम-उवरिम-गेवेज्जादागदा महासत्ता ।
संभव-सुपास-पउमा, महसुक्का वासुपुज्ज-जिणो ॥4॥

भावार्थ- ऋषभ और धर्मादिक (धर्म, शान्ति, कुन्थु) तीन तीर्थङ्कर सर्वार्थसिद्धि से अवतीर्ण हुए थे; अभिनन्दन और अजितनाथ विजय से; चन्द्रप्रभ वैजयन्त से; अर, नमि, मल्लि और नेमिनाथ अपराजित नामक विमान से; सुमतिनाथ जयन्त विमान से; पुष्पदन्त और शीतलनाथ क्रमशः आरण युगल से; अनन्त, श्रेयांस और वर्धमान जिनेन्द्र पुष्पोत्तर विमान से; विमल, शतार कल्प से; (मुनि) सुव्रत और पार्श्वनाथ क्रमशः आनत एवं प्राणत कल्प से; सम्भव, सुपार्श्व और पद्मप्रभ महापुरुष क्रमशः अधोग्रैवेयक, मध्यग्रैवेयक और ऊर्ध्वग्रैवेयक से, तथा वासुपूज्य जिनेन्द्र महाशुक्र कल्प से अवतीर्ण हुए थे।

ऋषभादि चौबीस तीर्थङ्करों के जन्म स्थान, माता-पिता, जन्मतिथि एवं जन्म नक्षत्रों के नाम-

जादो हु अवज्झाए, उसहो मरुदेवि-णाभिराएहिं।
चेत्तासिय-णवमीए, णक्खत्ते उत्तरासाढे ॥5॥

भावार्थ- ऋषभनाथ तीर्थंकर अयोध्या नगरी में, मरुदेवी माता एवं नाभिराय पिता से चैत्र-कृष्णा नवमी को उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में उत्पन्न हुए ।

माघस्स सुक्क-पक्खे, रोहिणि-रिक्खम्मि दसमि-दिवसम्मि ।
साकेदे अजिय-जिणो, जादो जियसत्तु-विजयाहिं ॥ 6॥

भावार्थ- अजित जिनेन्द्र साकेत नगरी में, पिता जितशत्रु एवं माता विजया से, माघ शुक्ला दसमी के दिन रोहिणी नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

सावट्ठीए संभवदेवो य जिदारिणा सुसेणाए ।
मग्गसिर-पुण्णिमाए, जेट्ठा-रिक्खम्मि संजादो ॥7॥

भावार्थ- सम्भवदेव श्रावस्ती नगरी में पिता जितारि और माता सुषेणा से मगसिर की पूर्णिमा के दिन ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न हुए ।

माघस्स बारसीए, सिदम्मि पक्खे पुणव्वसू-रिक्खे।
संवर-सिद्धत्थाहिं, साकेदे णंदणो जादो ॥8॥

भावार्थ- अभिनन्दनस्वामी साकेतपुरी में पिता संवर और माता सिद्धार्था से माघ शुक्ला द्वादशी को पुनर्वसु नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

मेघप्पहेण सुमइं, साकेद-पुरम्मि मंगलाए य।
सावण-सुक्केयारसि-दिवसम्मि मघासु संजणिदो॥9॥

भावार्थ- सुमतिनाथ जी साकेतपुरी में पिता मेघप्रभ और माता मङ्गला से श्रावण शुक्ला एकादशी के दिन मघा नक्षत्र में उत्पन्न हुए ।

अस्सजुद-किण्ह-तेरसि-दिणम्मि पउमप्पहो अ चित्तासु ।
धरणेण सुसीमाए, कोसंबी-पुरवरे जादो ॥10॥

भावार्थ- पद्मप्रभ ने कौशाम्बी पुरी में पिता धरण और माता सुसीमा से आसोज कृष्णा त्रयोदशी के दिन चित्रा नक्षत्र में जन्म लिया।

वाराणसिए पुहवी-सुपइट्ठेहिं सुपास-देवो य।
जेट्ठस्स सुक्क-बारसि-दिणम्मि जादो विसाहाए॥11॥

भावार्थ- सुपार्श्वदेव वाराणसी (बनारस) नगरी में पिता सुप्रतिष्ठ और माता पृथिवी से ज्येष्ठ शुक्ला द्वादशी के दिन विशाखा नक्षत्र में उत्पन्न हुए थे।

चंदपहो चंदपुरे, जादो महसेण-लच्छिमइ आहिं ।
पुस्सस्स किण्ह-एयारसिए अणुराह-णक्खत्ते॥12॥

भावार्थ- चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र चन्द्रपुरी में पिता महासेन और माता लक्ष्मीमती(लक्ष्मणा)से पौष कृष्णा एकादशी को अनुराधा नक्षत्र में अवतीर्ण हुए।

रामा-सुग्गीवेहिं, काकंदीए य पुप्फयंत-जिणो ।
मग्गसिर-पाडिवाए, सिदाए मूलम्मि संजणिदो॥13॥

भावार्थ- पुष्पदन्त जिनेन्द्र काकन्दी में पिता सुग्रीव और माता रामा से मगसिर शुक्ला प्रतिपदा को मूल नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

माघस्स बारसीए, पुव्वासाढासु किण्ह-पक्खम्मि ।
सीयल-सामी दिढरह-णंदाहिं भद्दिले जादो॥14॥

भावार्थ- शीतलनाथ स्वामी भद्दलपुर(भद्रिकापुरी) में पिता दृढ़रथ और माता नन्दा से माघ के कृष्ण पक्ष की द्वादशी को पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

सिंहपुरे सेयंसो, विण्हु-णरिंदेण वेणु-देवीए ।
एक्कारसिए फग्गुण-सिद-पक्खे सवण-भे जादो॥15॥

भावार्थ- श्रेयांसनाथ सिंहपुरी में पिता विष्णु नरेन्द्र और माता वेणुदेवी से फाल्गुन शुक्ला एकादशी को श्रवण नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

चंपाए वासुपुज्जो, वसुपुज्ज-णरेसरेण विजयाए।
फग्गुण-सुक्क-चउद्दसि-दिणम्मि जादो विसाहासु ॥16॥

भावार्थ- वासुपूज्य जी चम्पापुरी में पिता वसुपूज्य राजा और माता विजया से फाल्गुन शुक्ला चतुर्दशी के दिन विशाखा नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

कंपिल्लपुरे विमलो, जादो कदवम्म-जयस्सामाहिं।
माघ-सिद-चोद्दसीए, णक्खत्ते पुव्वभद्दपदे ॥17॥

भावार्थ- विमलनाथ कम्पिलापुरी में पिता कृतवर्मा और माता जयश्यामा से माघ-शुक्ला चतुर्दशी को पूर्वभाद्रपद नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

जेट्ठस्स बारसीए, किणहाए रेवदीसु य अणंतो ।
साकेदपुरे जादो, सव्वजसा-सिंहसेणेहिं ॥18॥

भावार्थ- अनन्तनाथ अयोध्यापुरी में पिता सिंहसेन और माता सर्वयशा से ज्येष्ठ-कृष्णा द्वादशी को रेवती नक्षत्रमें अवतीर्ण हुए।

रयणपुरे धम्म-जिणो, भाणु-णरिंदेण सुव्वदाए य ।
माघ-सिद-तेरसीए, जादो पुस्सम्मि णक्खत्ते ॥19॥

भावार्थ- धर्मनाथ तीर्थंकर रत्नपुर में पिता भानु नरेन्द्र और माता सुव्रता से माघ-शुक्ला त्रयोदशी को पुष्य नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

जेट्ठ-सिद-बारसीए, भरणी-रिक्खम्मि संतिणाहो य ।
हत्थिणउरम्मि जादो, अइराए विस्ससेणेण ॥20॥

भावार्थ- शान्तिनाथ जी हस्तिनापुर में पिता विश्वसेन और माता ऐरा से ज्येष्ठ-शुक्ला द्वादशी को भरणी नक्षत्र में उत्पन्न हुए ॥

तत्थ च्चिय कुंथु-जिणो, सिरिमइ-देवीसु सूरसेणेण ।
बइसाह-पाडिवाए, सिय-पक्खे कित्तियासु संजणिदो ॥21॥

भावार्थ- कुन्थुनाथ जिनेन्द्र हस्तिनापुर में पिता सूर्यसेन और माता श्रीमती देवी से वैशाख शुक्ला प्रतिपदा को कृतिका नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

मग्गसिर-चोद्दसीए, सिद-पक्खे रोहिणीसु अर-देवो ।
णागपुरे संजणिदो, मित्ताए सुदरिसणावणिंदेसुं ॥22॥

भावार्थ- अरनाथ जी हस्तिनापुर में पिता सुदर्शन राजा और माता मित्रा से मगसिर-शुक्ला चतुर्दशी को रोहिणी नक्षत्र में अवतीर्ण हुए।

मिहिलाए मल्लि-जिणो, पहवदीए कुंभअक्खिदीसेहि ।
मग्गसिर-सुक्क-एक्कादसीए अस्सिणीए संजादो ॥ 23॥

भावार्थ- मल्लिनाथ जी मिथिलापुरी में पिता कुम्भ और माता प्रभावती से मगसिर शुक्ला एकादशी को अश्विनी नक्षत्र में उत्पन्न हुए ।

रायगिहे मुणिसुव्वय-देवो पउमा-सुमित्त-राएहिं ।
अस्सजुद-बारसीए, सिद-पक्खे सवण-भे जादो ॥24॥

भावार्थ- मुनिसुव्रतदेव राजगृह में पिता सुमित्र राजा और माता पद्मा से आसोज शुक्ला द्वादशी को श्रवण नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

मिहिला-पुरिए जादो, विजय-णरिंदेण वप्पिलाए य ।
अस्सिणि-रिक्खे आसाढ-सुक्क-दसमीए णमिसामी ॥25॥

भावार्थ- नमिनाथ स्वामी मिथिलापुरी में पिता विजयनरेन्द्र और माता वप्रिला से आषाढ़ शुक्ला दशमी को अश्विनी नक्षत्र में अवतीर्ण हुए।

सउरी-पुरम्मि जादो, सिवदेवीए समुद्दविजएण ।
बइसाह-तेरसीए, सिदाए चित्तासु णेमि-जिणो ॥26॥

भावार्थ- नेमि जिनेन्द्र शौरीपुर में पिता समुद्रविजय और माता शिवदेवी से वैशाख-शुक्ला त्रयोदशी को चित्रा नक्षत्र में अवतीर्ण हुए।

हयसेण-वम्मिलाहिं, जादो वाणारसीए पास-जिणो ।
पुस्सस्स बहुल-एक्कारसिए रिक्खे विसाहाए ॥27॥

भावार्थ- पार्श्वनाथ जिनेन्द्र वाराणसी नगरी में पिता अश्वसेन और माता वर्मिला(वामा) से पौष-कृष्णा एकादशी को विशाखा नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

सिद्धत्थराय-पियकारिणीहि णयरम्मि कुंडले वीरो। उत्तरफग्गुणि-रिक्खे, चेत्त-सिद तेरसीए उप्पण्णो ॥28॥

भावार्थ-वीर जिनेन्द्र कुण्डलपुर में पिता सिद्धार्थ और माता प्रियकारिणी (त्रिशला) से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

चौबीस तीर्थङ्करों के वंशों का निर्देश

इंदवज्जा

धम्मार-कुंथू कुरुवंस-जादा, णाहोग्ग-वंसेसु वि वीर-पासा ।
सो सुव्वदो जादव-वंस-जम्मा, णेमी अ इक्खाकु-कुलम्मि सेसा ॥29॥

भावार्थ- धर्मनाथ, अरनाथ और कुंथुनाथ कुरुवंश में उत्पन्न हुए। महावीर और पार्श्वनाथ क्रमशः नाथ एवं उग्रवंश में, मुनिसुव्रत और नेमिनाथ यादव (हरि) वंश में तथा शेष सब तीर्थङ्कर इक्ष्वाकु कुल में उत्पन्न हुए ।

चौबीस तीर्थङ्करों की भक्ति करने का फल

इंदवज्जा

एदे जिणिंदे भरहम्मि खेत्ते, भव्वाण पुण्णेहि कदावतारे ।
काएण वाचा मणसा णमंता, सोक्खाइ मोक्खाइ लहंति भव्वा ॥30॥

भावार्थ- भव्य-जीवों के पुण्योदय से भरतक्षेत्र में अवतीर्ण हुए इन चौबीस तीर्थङ्करों को जो भव्यजीव मन-वचन-काय से नमस्कार करते हैं, वे मोक्षसुख पाते हैं।

धोडक

केवलणाण-वणप्फइ-कंदे, तित्थयरे चउवीस-जिणिंदे ।
जो अहिणंदइ भत्ति-पयत्तो, बज्झइ तस्स पुरंदर-पट्टो ॥31॥

भावार्थ- भक्ति में प्रवृत होकर जो कोई भी केवलज्ञानरूप वनस्पति के कन्द और तीर्थ के प्रवर्तक चौबीस तीर्थङ्करों का अभिनन्दन करता है उसके इन्द्र का पट्ट बँधता है।

णिव्वाणकल्लाणभत्ति
(निर्वाण कल्याण भक्ति)

- आचार्य यतिवृषभ विरचित

माघस्स किण्ह-चोद्दसि-पुव्वण्हे णियय-जम्म-णक्खत्ते ।
अट्ठावयम्मि उसहो, अजुदेण समं गओ मोक्खं ।।1।।

भावार्थ- ऋषभदेव माघ-कृष्णा चतुर्दशी के पूर्वाह्न में अपने जन्म(उत्तराषाढा) नक्षत्र के रहते कैलाशपर्वत से दस हजार मुनिराजों के साथ मोक्ष को प्राप्त हुए।

चेत्तस्स सुद्ध-पंचमि-पुव्वण्हे भरणि-णाम-णक्खत्ते।
सम्मेदे अजियजिणो, मुत्तिं पत्तो सहस्स-समं ।।2।।

भावार्थ- अजित जिनेन्द्र चैत्र शुक्ला पंचमी के पूर्वाह्न में भरणी नक्षत्र के रहते सम्मेदशिखर से एक हजार मुनियों के साथ मुक्ति को प्राप्त हुए ।

चेत्तस्स सुक्क-छट्ठी-अवरण्हे जम्म-भम्मि सम्मेदे ।
संपत्तो अपवग्गं संभवसामी सहस्स-जुदो।।3।।

भावार्थ- सम्भवनाथ स्वामी चैत्र शुक्ला षष्ठी के अपराह्न में जन्म (ज्येष्ठा) नक्षत्र के रहते सम्मेदशिखर से एक हजार मुनियों के साथ मोक्ष को प्राप्त हुए हैं।

वइसाह-सुक्क-सत्तमि, पुव्वण्हे जम्म-भम्मि सम्मेदे।
दस-सय-महस्सि-सहिदो, णंदणदेवो गदो मोक्खं ।।4।।

भावार्थ- अभिनन्दन देव वैशाख शुक्ला सप्तमी के पूर्वाह्न में अपने जन्म(पुनर्वसु)नक्षत्र के रहते सम्मेदशिखर से एक हजार महर्षियों के साथ मोक्ष को प्राप्त हुए ।

चेत्तस्स सुक्क-दसमी-पुव्वण्हे जम्म-भम्मि सम्मेदे ।
दस-सय रिसि-संजुत्तो, सुमई णिव्वाणमावण्णो ।।5।।

भावार्थ- सुमति जिनेन्द्र चैत्र-शुक्ला दसमी के पूर्वाह्न में अपने जन्म(मघा) नक्षत्र के रहते सम्मेदशिखर से एक हजार ऋषियों के साथ निर्वाण को प्राप्त हुए ।

फग्गुण-किण्ह-चउत्थी-अवरण्हे जम्म-भम्मि सम्मेदे ।
चउवीसाहिय-तिय-सय-सहिदो पउमप्पहो देवो ।।6।।

भावार्थ- पद्मप्रभदेव फाल्गुन-कृष्णा चतुर्थी के अपराह्न में अपने जन्म (चित्रा) नक्षत्र के रहते सम्मेद शिखर से तीन सौ चौबीस मुनियों के साथ मुक्ति को प्राप्त हुए हैं ।

फग्गुण-बहुलच्छट्ठी-पुव्वण्हे पव्वदम्मि सम्मेदे ।
अणुराहाए पण-सय-जुत्तो मुत्तो सुपास-जिणो ।।7।।

भावार्थ- सुपार्श्व जिनेन्द्र फाल्गुन-कृष्णा षष्ठी के पूर्वाह्न में अनुराधा नक्षत्र के रहते सम्मेद पर्वत से पाँच सौ मुनियों सहित मुक्ति को प्राप्त हुए हैं।

सिद-सत्तमि-पुव्वण्हे, भद्दपदे मुणि सहस्स-संजुत्तो ।
जेट्ठेसुं सम्मेदे, चंदप्पह-जिणवरो सिद्धो ।।8।।

भावार्थ- चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्र भाद्रपद शुक्ला सप्तमी के पूर्वाह्न में ज्येष्ठा नक्षत्र के रहते एक हजार मुनियों सहित सम्मेद शिखर से मुक्त हुए हैं ।

अस्सजुद-सुक्क-अट्ठमि-अवरण्हे जम्म-भम्मि सम्मेदे ।
मुणिवर-सहस्स-सहिदो, सिद्धि-गदो पुप्फदंत-जिणो ।।9।।

भावार्थ- पुष्पदन्त जिनेन्द्र आश्विन-शुक्ला अष्टमी के अपराह्न में अपने जन्म(मूल) नक्षत्र के रहते सम्मेदशिखर से एक हजार मुनियों के साथ सिद्धि को प्राप्त हुए हैं ।

कत्तिय-सुक्के पंचमि-पुव्वण्हे जम्म-भम्मि सम्मेदे ।
णिव्वाणं संपत्तो, सीयलदेवो सहस्स-जुदो।।10।।

भावार्थ- शीतलनाथ जिनेन्द्र कार्तिक शुक्ला पंचमी के पूर्वाह्न में अपने जन्म(पूर्वाषाढ़ा) नक्षत्र के रहते सम्मेदशिखर से एक हजार मुनियों के साथ निर्वाण को प्राप्त हुए हैं।

सावणय-पुण्णिमाए, पुव्वण्हे मुणि-सहस्स संजुत्तो ।
सम्मेदे सेयंसो, सिद्धिं पत्तो धणिट्ठासुं।।11।।

भावार्थ- भगवान् श्रेयांसनाथ श्रावण(शुक्ला) पूर्णिमा के पूर्वाह्न में धनिष्ठा नक्षत्र के रहते सम्मेदशिखर से एक हजार मुनियों के साथ सिद्धि को प्राप्त हुए हैं ।

फग्गुण-बहुले पंचमि-अवरण्हे अस्सिणीसु चंपाए।
रूवाहिय-छ-सय-जुदो सिद्धि-गदो वासुपुज्ज-जिणो।।12।।

भावार्थ- वासुपूज्य जिनेन्द्र फाल्गुन-कृष्णा पंचमी के दिन अपराह्न में अश्विनी नक्षत्र के रहते छह सौ एक मुनियों के साथ चम्पापुर से सिद्धि को प्राप्त हुए हैं ।

सुक्कट्ठमी-पदोसे, आसाढे जम्म-भम्मि सम्मेदे ।
छस्सय-मुणि संजुत्तो, मुत्तिं पत्तो विमलसामी ।।13।।

भावार्थ- विमलनाथ स्वामी आषाढ़ शुक्ला अष्टमी को प्रदोष काल (दिन और रात्रि के सन्धिकाल) में अपने जन्म (पूर्वभाद्रपद) नक्षत्र के रहते छह सौ मुनियों के साथ सम्मेदशिखर से मुक्त हुए ।

चेत्तस्स किण्ह-पच्छिम-दिणप्पदोसम्मि जम्म-णक्खत्ते।
सम्मेदम्मि अणंतो, सत्त-सहस्सेहि संपत्तो ।।14।।

भावार्थ-अनन्तनाथ स्वामी चैत्रमास के कृष्णपक्ष सम्बन्धी पश्चिम दिन(अमावस्या) को प्रदोष काल में अपने जन्म(रेवती)नक्षत्र में सम्मेदशिखर से सात हजार मुनियोंके साथ मोक्ष को प्राप्त हुए हैं ।

जेट्ठस्स किण्ह-चोद्दसि पज्जूसे जम्म-भम्मि सम्मेदे ।
सिद्धो धम्म-जिणिंदो, रूवाहिय-अड-सएहि जुदो ।।15 ।।

भावार्थ- धर्मनाथ जिनेन्द्र ज्येष्ठ कृष्णा चतुर्दशी को प्रत्यूष(रात्रि के अन्तिम भाग-प्रभात) काल में अपने जन्म (पुष्य) नक्षत्र के रहते आठ सौ एक मुनियों के साथ सम्मेदशिखर से सिद्ध हुए हैं।

जेट्ठस्स किण्ह-चोद्दसि-पदोस-समयम्मि जम्म-णक्खत्ते ।
सम्मेदे संति-जिणो, णव-सय-मुणि-संजुदो सिद्धो ।।16।।

भावार्थ- शान्तिनाथ जिनेन्द्र ज्येष्ट कृष्णा चतुर्दशी को प्रदोषकाल में अपने जन्म(भरणी) नक्षत्र में नौ सौ मुनियों के साथ सम्मेदशिखर से सिद्ध हुए ।

वइसाह-सुक्क-पाडिव-पदोस-समयम्हि जम्म-णक्खत्ते ।
सम्मेदे कुंथु-जिणो, सहस्स-सहिदो गदो सिद्धिं ।।17।।

भावार्थ- कुन्थु जिनेन्द्र वैशाख शुक्ला प्रतिपदा को प्रदोष-काल में अपने जन्म(कृतिका)नक्षत्र के रहते एक हजार मुनियों के साथ सम्मेदशिखर से सिद्धि को प्राप्त हुए हैं ।

चेत्तस्स बहुल-चरिमे, दिणम्मि णिय जम्मि-भम्मि पज्जूसे ।
सम्मेदे अर-देओ, सहस्स-सहिदो गदो मोक्खं ।।18।।

भावार्थ- अरनाथ भगवान ने चैत्र-कृष्णा अमावस्या को प्रत्यूष-काल में अपने जन्म(रोहणी) नक्षत्र के रहते एक हजार मुनियों के साथ सम्मेद शिखर से मोक्ष प्राप्त किया है।

पंचमि-पदोस-समए, फग्गुण-बहुलम्मि भरणि-णक्खत्ते ।
सम्मेदे मल्लिजिणो, पंच-सय-समं गदो मोक्खं ।।19।।

भावार्थ- मल्लिनाथ तीर्थंकर फाल्गुन-कृष्णा पंचमी को प्रदोष समय में भरणी नक्षत्र के रहते सम्मेद शिखर से पाँच सौ मुनियोंके साथ मोक्ष को प्राप्त हुए हैं ।

फग्गुण-किण्हे बारसि-पदोस-समयम्मि जम्म-णक्खत्ते ।
सम्मेदम्मि विमुक्को, सुव्वद-देवो सहस्स-जुत्तो ।।20।।

भावार्थ- मुनिसुव्रत जिनेन्द्र फाल्गुन-कृष्णा बारस को प्रदोष समय में अपने जन्म(श्रवण) नक्षत्र के रहते एक हजार मुनियों के साथ सम्मेदशिखर से सिद्धि को प्राप्त हुए हैं ।

वइसाह-किण्ह-चोद्दसि, पज्जूसे जम्म-भम्मि सम्मेदे ।
णिस्सेयसं पवण्णो, समं सहस्सेण णमि-सामी ।।21।।

भावार्थ- नमिनाथ स्वामी वैशाख-कृष्णा चतुर्दशी के प्रत्यूषकाल में अपने जन्म(अश्विनी)नक्षत्र के रहते सम्मेदशिखर से एक हजार मुनियों के साथ नि:श्रेयस पद को प्राप्त हुए हैं ।

बहुलट्ठमी-पदोसे, आसाढे जम्म-भम्मि उज्जंते ।
छत्तीसाहिय-पण-सय सहिदो णेमीसरो सिद्धो ।।22।।

भावार्थ- नेमिनाथ जिनेन्द्र आषाढ़ कृष्णा अष्टमी को प्रदोष काल में अपने जन्म (चित्रा) नक्षत्र के रहते पाँच सौ छत्तीस मुनिराजों के साथ ऊर्जयन्त गिरि से सिद्ध हुए हैं।

सिद-सत्तमी-पदोसे, सावण-मासम्मि जम्म-णक्खत्ते।
सम्मेदे पासजिणो, छत्तीस-जुदो गदो मोक्खं ।।23।।

भावार्थ- पार्श्वनाथ जिनेन्द्र श्रावण मास में शुक्लपक्ष की सप्तमी के प्रदोष काल में अपने जन्म(विशाखा) नक्षत्र के रहते छत्तीस मुनियों सहित सम्मेदशिखर से मोक्ष को प्राप्त हुए हैं। सम्मेद शिखर से पाँच सौ मुनियों के साथ मोक्ष को प्राप्त हुए हैं ।

कत्तिय-किण्हे चोद्दसि, पज्जूसे सादि-णाम-णक्खत्ते ।
पावाए णयरीए, एक्को वीरेसरो सिद्धो ।।24।।

भावार्थ- वीर जिनेश्वर कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी के प्रत्यूष-काल में स्वाति नामक नक्षत्र के रहते पावानगरी से अकेले ही सिद्ध हुए हैं।

ऋषभादि जिनेन्द्रों का योग-निवृत्ति काल

उसहो चोद्दसि दिवसे, दु-दिणं वीरेसरस्स सेसाणं।
मासेण य विणिवित्ते, जोगादो मुत्ति-संपण्णो ।।25।।

भावार्थ- ऋषभजिनेन्द्र ने चौदह दिन पूर्व, वीर जिनेन्द्र ने दो दिन पूर्व और शेष तीर्थंकरों ने एक मास पूर्व योग से निवृत्त होने पर मोक्ष प्राप्त किया है।

तीर्थंकरों के मुक्त होने के आसन

उसहो य वासुपुज्जो, णेमी पल्लंक-बद्धया सिद्धा ।
काउस्सग्गेण जिणा, सेसा मुत्तिं समावण्णा ।।26।।

भावार्थ- ऋषभनाथ, वासुपूज्य एवं नेमिनाथ पल्यङ्क-बद्ध-आसन से तथा शेष जिनेन्द्र कायोत्सर्ग मुद्रा से मोक्ष को प्राप्त हुए हैं ।

शिलायामिह ये सिद्धा, ये चान्ये हतकिल्विषाः।
ते विघ्नसूदनाः सर्वे, भवन्तु तव मंगलम्।।27।।

भावार्थ- इस शिला से जो सिद्ध हुए हैं तथा अन्य जिन पुरुषों ने पापकर्म नष्ट किये हैं, वे सब विघ्नविनाशक तुम्हारे लिए मंगल स्वरुप हों।।

अर्हन्तो मङ्गलं सन्तु, तव सिद्धाश्च मङ्गलं।
मङ्गलं साधवः सर्वे, मङ्गलं जिनशासनम्।।28।।

भावार्थ- अरिहन्त भगवान तुम्हारे लिए मंगल स्वरुप हों, सिद्ध परमेष्ठी मंगलरूप हों, सर्वसाधु परमेष्ठी मंगलरूप हों, और जिनशासन मंगलरूप हों।

जिणवाणी थुदि (जिनवाणी स्तुति)

–मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी

सिरि जिणवाणी जग कल्लाणी
जगजणमदतममोहहरी
जणमणहारी गणहरहारी
जम्मजराभवरोगहरी ।
तित्थयराणं दिव्वझुणिं जो
पढइ सुणइ मईए धारइ
णाणं सोक्खमणंतं धरिय
सासद मोक्खपदं पावइ ।।

भावार्थ– श्री जिनवाणी जगत का कल्याण करने वाली है। जगत के प्राणियों के मद, अज्ञान अंधकार और मोह का हरण करती है। सभी जनों के लिए मनोहर है, गणधरों के द्वारा धारण की जाती है। जन्म, जरा रूप संसार का रोग हरण करती है। तीर्थंकरों की दिव्य ध्वनि (जिनवाणी) को जो पढ़ता है, सुनता है और मति में धारण करता है, वह अनन्त ज्ञान और अनन्त सुख को धारण करके शाश्वत मोक्ष पद को प्राप्त करता है।